ISSN 2815-8326

हिंदी त्रैमासिक

पहचान

देश से हम, हमसे देश

वर्ष 1, अंक 3, जनवरी - मार्च 2023, पृष्ठ संख्या 32

आवरण चित्र : कटोरा ताल, ग्वालियर

छायाकार : संजय दत्त शर्मा

BEST CONSTRUCTION

BETTER HOME

ARCHPOINT LTD

ArchPoint Ltd

You Dream, We make the Dreams True!

Our Best Services:

- PROVIDING END-TO-END RESOURCE CONSENT, EPA AND BUILDING CONSENT SERVICES
- FEASIBILITY STUDIES - PRE & POST PURCHASE OF YOUR PROPERTY
- ARCHITECTURAL DESIGNING
- PLANNING & PROJECT MANAGEMENT
- SURVEYING
- GEOTECHNICAL INVESTIGATIONS & REPORTS
- CIVIL ENGINEERING FOR INFRASTRUCTURE DESIGNING
- STRUCTURAL ENGINEERING

engineering new zealand

LICENSED BUILDING PRACTITIONER BUILDING CONFIDENCE

PMI NEW ZEALAND CHAPTER

ADNZ Professional Member

64 21848 552 archpoint.co.nz

GODWIN-AUSTEN

GODWIN-AUSTEN

You Wish, We bring the wishes to Reality!

Our Best Services:

- Subdivisions & Building Construction on Turn Key Basis
- Land and Home Packages
- Design & Build
- 10 Years Master Builder Guarantee
- Auckland Wide Operations

MASTER BUILDERS

PMI NEW ZEALAND CHAPTER

64 21889 918 OR 64 21848 552 godwinausten.co.nz

हिंदी त्रैमासिक
पहचान
देश से हम, हमसे देश

संस्थापक/ प्रधान संपादक
प्रीता व्यास

सलाहकार संपादक
रोहित कृष्ण नंदन

सहयोगी संपादक
माला चौहान

ले आउट/ ग्राफिक्स
Design n Print, India

कवर पेज
संजय दत्त शर्मा

प्रकाशक
पहचान
आकलैंड, न्यूज़ीलैंड

editor@pehachaan.com

पत्रिका में प्रकाशित लेख, रचनाएं, साक्षात्कार लेखकों के निजी विचार हैं, उनसे प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं. रचनाओं की मौलिकता के लिए लेखक स्वयं जिम्मेवार है. कुछ चित्र और लेखों में प्रयुक्त कुछ आंकड़े इंटरनेट वेबसाइट से संकलित किये गए हो सकते हैं.

कैलेंडर बदला है दिन नहीं बदले....

ऐसी निराशा के साथ नहीं बल्कि बहुत सी नई आशाओं, उमंगों, वादों और इरादों के साथ शुरू हो सबका नव वर्ष इस कामना के साथ ही बात शुरू कर रही हूं. हालांकि ये काल गणना का हमारा कैलेंडर नहीं लेकिन दुनिया में काम काज की आसानी के लिए इसे ही गिना जाता है, सो इस लिहाज से विवादों में ना उलझते हुए नव वर्ष की सभी को मंगलकामनाएं.

बहुत से लोग किसी नए काम के लिए, परिवर्तन के लिए इस पहली जनवरी का इंतज़ार करते हैं 'न्यू ईयर रिसोल्यूशन'. तय किया कि आज से हेल्दी खाएंगे, या फिर ये कि रोज़ कसरत/ योग/ सैर आदि कुछ करेंगे, या फिर ये कि बिना गाली दिए वाक्य पूरे करेंगे, या फिर ये कि घर परिवार को ज़्यादा समय देंगे, या फिर ये कि .... बड़ी लंबी हो सकती है ये नेक इरादों की फेहरिस्त. अगर आपने ऐसा कोई 'न्यू ईयर रिसोल्यूशन' लिया है तो हमारी शुभकामनाएं हैं कि आप उस इरादे पर दृढ़ रह सकें.

बड़ी और ज़रूरी बात तो ये है कि किसी भी अच्छी बात को शुरू करने के लिए आपको किसी एक ख़ास दिन तक रुकने की ज़रुरत ही नहीं है. जागृति का क्षण जिस समय आये उसका स्वागत उसी समय करें. जब ये ध्यान आये कि मुझे अपने व्यवहार में, काम में ये बदलाव लाना है तो उसी समय से ठान लें, इस बात की राह ना देखें कि जब साल का पहला दिन आएगा तभी ये भला काम शुरू होगा.

ठंड बहुत है. बर्फ़ीलापन जब बढ़ता है धरती पर तो पेड़ पौधों, जीव जंतुओं के लिए जीवन को बनाये रखने का संकट बढ़ने लगता है और जब ये बर्फ़ीलापन संस्कारों पर, संबंधों पर सवार होता है तब भी अस्तित्व के लिए चुनौती पैदा हो जाती है. पिछले कुछ साल बड़े चुनौती पूर्ण रहे हैं सो इन सर्दियों में अपने स्वास्थ्य का पूरा ध्यान रखें. 'पहचान' से जुड़े रहें ताकि इसमें शामिल अपनी जड़ों से जुडी बातें, कहानी, कविता, गीत, ग़ज़ल आदि की मीठी गरमाहट आपको ज़हनी ठिठुरन से बचाती रहे.

पुन: शुभकामनाएं.

प्रीता व्यास
प्रधान संपादक

इस अंक में...

अनुक्रम

पाठकीय प्रतिक्रियाएं		5
आलेख		
हम क्यों भूलते जा रहे हैं विक्रम संवत	राजशेखर व्यास	6-8
लोक जीवन		
बुंदेलखंड की बुड़की	विनीता गुप्ता	9-10
रीति रिवाज		
इस बार 'वान' में क्या देंगे ?	शरद कोकास	11-12
यात्रा		
प्रयागराज कुंभ की यादें	विजय कुमार अग्रहरि 'आलोक'	13-15
गीत		
जय-जय शारदा	डॉ. निधि सिंह	16
कविता		
याद अपने गांव की	सुनील श्रीवास्तव	17
सिल बट्टा	डॉ. भूपेंद्र बिष्ट	18
लघु कविताएं	डॉ. जी.के.शर्मा मृदुल, नीलोत्पल	19
कविता		
वेलेंटाइन दिवस पर विशेष कुत्तू के लिए प्रपोज़ल्स	पल्लवी त्रिवेदी	20
धरोहर		
गढ़ कुंडार का किला	कुमार रुपेश	21
कहानी		
दलाल	रामेश्वरी महादेव वाढ़ेकर	22-23
व्यक्तित्व		
निखत ज़रीन - भारत की पांचवीं महिला बॉक्सर	कृपा मालाराव	24
बाल कहानी		
मंत्री बंदर मस्त कलंदर	डॉ. हेमंत कुमार	25-26
पुस्तक समीक्षा		
कथाओं को प्रावहमान करती 'नदी की आंखे'	नवीन जोशी	27-28
सिनेमा		
गुलज़ार यूं ही गुलज़ार नहीं	डॉ. अनुराग आर्य	29-30
चित्र चयन		
इस तिमाही का चित्र	मनीष आर्य	32

पाठकीय प्रतिक्रियाएं

परदेश से स्वभाषा प्रेम का जीवंत प्रमाण है यह पत्रिका. अपनी राष्ट्रीय अस्मिता, संस्कृति की पहचान को बचाये रखने के लिए किसी भी को अपनी भाषा में अपनी भावोभिव्यक्ति को ही प्राथमिकता देने श्रेयस्कर है. विधा कोई भी हो,अपने कथ्य विषय में अपनी जातीय अस्मिता की पहचान कायम रखना पहला दायित्व है. इसे पढ़कर सुख, आनन्द, गर्व तुष्टि सर से परिपूर्ण हूं. देश के मध्यप्रान्त के हृदयस्थल में कर्क रेखा गमन पथ पर आबाद छोटी महानदी, जिला कटनी की एक सुदूर गंवई से में एक किसान खेतिहर, अदना सा हिंदी सेवी, सेवानिवृत्त हिदी शिक्षक, कवि कथाकार आप सभी लेखकों को हार्दिक शुभकामना प्रेषित करता हूं.

-देवेंद्र कुमार पाठक

सुंदर रचनाओं का संग्रह है पहचान का यह अंक. अति मनमोहन और ज्ञानवर्धक भी.

- सोमनाथ गुप्ता
'दीवाना रायकोटी', न्यूज़ीलैंड

हिंदी साहित्य के सभी क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करती अति उत्तम पत्रिका. हार्दिक शुभकामनाएं.

-मीत बनारसी
भारत

पहचान ने अपने अंकों से अपने मूल नाम शब्द को सार्थक कर दिया है. 'पहचान' की पहचान उसके प्रकाशन के स्तर से स्थापित हो रही है. बधाई आदरणीय संपादक प्रीता जी एवं पूर्ण टीम.

विनोद मिश्र सुरमनि
भारत

बहुत ही खूबसूरत पत्रिका हिंदी दिवस पर आप को बहुत बहुत शुभकामनाएं.

मन आर्य
भारत

सार्थक और सराहनीय प्रयास की बधाई स्वीकारें.

डॉ. सुनील त्रिपाठी निराला
भारत

पत्रिका की सभी रचनाएँ और वेबसाइट के सभी कॉलम अच्छे लगे, विशेष रूप से महान कवियों की वो घूमती हुई कविताएं. मुझे लेआउट और कंटेंट दोनों बहुत पसंद आये. शुभकामनाएं.

इसरानी बीना

बहुत सुंदर पत्रिका 'पहचान' जिसमें हर पहलुओं का समावेश हैं. मुझे ऐसी ही पत्रिका का इंतजार था. जिसमें एक साथ सब कुछ मिल जाये कला, साहित्य, स्वास्थ्य, कहानी, काव्य, लेख, आस्था इत्यादि.

स्नेहा तिवारी
भारत

हम क्यों भूलते जा रहे हैं विक्रम संवत ?

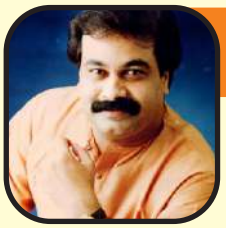

राजशेखर व्यास

विक्रम संवत के दो हज़ार साल का समाप्त होना भारतीय इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना थी. धूमिल अतीत में विक्रम के स्मारक स्वरूप जिस विक्रम संवत का प्रवर्तन हुआ था, उसके पथ की वर्तमान रेखा यद्यपि अंधकार में डूबी है परंतु इस डोर के सहारे हम अपने आप को उस श्रृंखला के क्रम में पाते हैं, जिसके अनेक अंश अत्यंत उज्जवल एवं गौरवमय रहे हैं. ये दो हज़ार वर्ष तो भारतीय इतिहास के उत्तरकाल के ही अंश हैं. विक्रम के उद्भव तक विशुद्ध वैदिक संस्कृति का काल, रामायण और महाभारत का युग, महावीर और गौतम बुद्ध का समय, पराक्रम सूर्य चंदगुप्त मौर्य एवं प्रियदर्शी अशोक का काल, अंतत: पुष्यमित्र शुंग की साहस गाथा सुदूरभूत की बातें बन चुकीं थीं. वेद, ब्राम्हण, उपनिषद, सूत्र ग्रन्थ एवं मुख्य स्मृतियों की रचना हो चुकी थी. वैयाकरण पाणिनि और पतंजलि अपनी कृतियों से पंडितों को चकित कर चुके थे और कौटिल्य की ख्याति सफल राजनीतिज्ञता के कारण फ़ैल चुकी थी. उन पिछले दो हज़ार वर्षों की लंबी यात्रा में भी भारत के शौर्य ने उसकी प्रतिभा के शौर्य ने उसकी विद्वत्ता ने जो मान स्थित कर दिए हैं, वे विगत शताब्दियों के बहुत कुछ अनुरूप हैं. विक्रम संवत के प्रथम हज़ारों वर्षों में हमने मात्र शिवनागों, समुद्रगुप्त, चंद्रगुप्त, विक्रमादित्य, स्कंदगुप्त, यशोधर्मन, विष्णुवर्धन आदि के बल और प्रताप के सम्मुख विदेशी शक्तियों को थर थर कांपते हुए देखा. भारत के उपनिवेश बसते देखे, भारत की संस्कृति और उसके धर्म का प्रसार बाहर के देशों में देखा. कालिदास, भवभूति, भारवि, माघ आदि की काव्य प्रतिभा तथा दंडी और बाणभट्ट की विलक्षण लेखन शक्ति देखी, कुमारिल भट्ट और शंकराचार्य का बुद्धि वैभव देखा और स्वतंत्रता की अग्नि को सदैव प्रज्जवलित रखने वाली राजपूत जाति के उत्थान व संगठन को देखा. हालांकि दूसरी सहस्त्राब्दी में भाग्य चक्र की गति थोड़ी सी विपरीत हो गई, उसने उपनिवेशों का उजाड़ना दिखाया और भारतीयों की हार तथा बहुमुखी पतन भी हमने देखा. परंतु उनकी आंतरिक जीवन शक्ति का ह्रास नहीं हुआ और हमने ये भी दिखा दिया कि गिरकर भी कैसे उठा जा सकता है.

भारतीय संस्कृति के अभिमानियों के लिए यह कम गौरव की बात नहीं. आज भारतवर्ष में प्रवर्तित विक्रम संवत्सर, बुद्ध निर्वाण काल गणना को छोड़कर संसार के प्राय: सभी प्रचलित ऐतिहासिक संवतों से अधिक प्राचीन है.

विक्रम 'यह' था या 'वह', यह विवाद केवल अनुसंधान प्रिय पंडितों का समीक्षार्थ विषय है. आज संपूर्ण विश्व में जिस प्रकाशपुंज की विमल, धवल कीर्ति फ़ैल रही है वह कहां से और कैसे उद्भव हो गई है, वह तो इतिहासकर्ताओं की अनुसंधानशाला तक मर्यादित है. उनसे उच्च कोटि के मान स्वरूप तो वर्षों से 'विक्रम' को अपने ह्रदय में संजोये बैठे हैं.

दरअसल 'विक्रम' में हम अपने देश की परतंत्र पाश पीड़ा से मुक्ति दिलाने वाली समर्थ शक्ति की अभ्यर्थना करते हैं. इसकी पावन स्मृति की धरोहर संवत वर्षकाल गणना की स्मरण मणि की तरह इतिहास की श्रृंखलाएं भी एक दूसरे से जुड़ती चली जाती हैं. विक्रम, कालिदास और उज्जयिनी हमारे स्वाभिमान, शौर्य और स्वर्णयुग के अभिमान का विषय हैं.

उसी उज्जयिनी में सांदीपनी वंश में उत्पन्न पद्मभूषण, साहित्य वाचस्पति स्व. पं. सूर्यनारायण व्यास ने विक्रम सम्वत के दो हज़ार वर्ष पूर्ण होने पर एक मासिक पत्र 'विक्रम' का प्रकाशन आरम्भ किया. पं. व्यास का अपना निजी प्रेस था जहां से वे अपने पंचांग का प्रकाशन करते थे. 'विक्रम' मासिक विक्रमद्ध का प्रकाशन एक विशेष उद्देश्य को लेकर किया गया था. विशेषकर उन दिनों जब हिंदी में चांद, हंस, वीणा, माधुरी, सुधा, सरस्वती जैसी प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्रिकाएं सुस्थापित थीं. पं. व्यास का उज्जैन जैसे छोटे कस्बे से 'विक्रम' का प्रकाशन दुस्साहस ही कहा जाएगा. मगर 'विक्रम' तो मानो उनके बल, विक्रम, पुरुषार्थ का परिचायक ही बन गया था.

हज़ारों वर्षों से हमारे इतिहास को जो विकृत और धूमिल किया जा रहा था उससे पं. व्यास मानो लोहा लेने खड़े हुए थे. अर्से से हमें पढ़ाया जा रहा था, हम मुगलों की, अंग्रेज़ों के गुलाम रहे हैं. हम शोषित, पीड़ित और गुलामों को पं. व्यास ने एक प्रबल बल, विक्रम और पुरुषार्थ पराक्रमी नायक, चरित्र नायक संवत प्रवर्तक सम्राट विक्रमादित्य दिया और बताया कि हम आरंभ से ही परास्त, पराजित, पराभूत और शोषित नहीं रहे हैं बल्कि 'शक' और हूणों को परास्त करने वाला हमारा नायक शकारि विक्रमादित्य विजय और विक्रम का दूसरा प्रतीक है. कालिदास समारोह के जन्म से भी पुरानी घटना है यह, जब उज्जयिनी में पं. व्यास ने विक्रम द्विसहस्त्राब्दि समारोह समिति का गठन कर सम्राट विक्रम की पावन स्मृति में चार महत उद्देश्यों की स्थापना का संकल्प लिया. वे उद्देश्य थे, विक्रम के नाम पर एक ऐसे विश्वविध्यालय की स्थापना जो साहित्य, शिक्षा, कला, संस्कृति की त्रिवेणी हो. वो विक्रम कीर्ति मंदिर, नाट्यशाला स्थापना और विक्रम स्मृति ग्रन्थ का प्रकाशन.

इसमें कोई शक नहीं कि विक्रम द्विशास्त्राब्दी की उनकी इस योजना में उनके सबसे अंतरंग स्नेही, सहयोगी महाराजा जीवाजीराव सिंधिया का विशेष सहयोग रहा. 'विक्रम पत्र' के माध्यम से जब यह योजना देश के सम्मुख पं. व्यास ने रखी तब वे भी नहीं जानते थे कि उनकी इस योजना का इतना सम्यक स्वागत होगा. विशेषकर वीर सावरकर और के. एम. मुंशी जी ने अपने पत्र 'सोशल वेलफेयर' में इस योजना का प्रारूप संपूर्ण विवरण के साथ विस्तार से प्रकाशित किया और सारे देश से इस पुण्य कार्य में पूर्ण सहयोग देने की प्रार्थना की.

महाराज देवास ने इस कार्य के लिए सारा धन देना स्वीकार किया मगर शर्त ये रखी कि सारे सूत्र उनके हाथों में रखे जाएं. मगर विधि को कुछ और ही मंजूर था, पं. व्यास अपने व्यक्तिगत कार्यवश मुंबई गए और वहां मुंशी जी से मिलकर योजना पर विस्तार से चर्चा की. महाराजा सिंधिया का उन्हें निमंत्रण मिला.

महाराजा जीवाजीराव सिंधिया ने पंडित व्यास को बताया कि वे इस योजना को अत्यंत महत्वपूर्ण मानते हैं और इस कार्य को एक समिति बना कर आगे बढ़ाना चाहिए. यह चर्चा कुछ ही क्षणों में हो गई. पंडित व्यास महाराज से मिलकर कक्ष से बाहर निकले ही थे कि महाराज ने पुन: आवाज़ दी और विस्तार से चर्चा का पुन: आमंत्रण दिया. अगली मुलाकात दो चार मिनिट की नहीं बल्कि ढाई घंटे की हुई और इस चर्चा ने तो सारी रूपरेखा ही बदल दी. व्यापक रूप से समारोह करने की बात तय हुई। इस तरह पंडित व्यास सप्ताह भर ग्वालियर रुके और रोजाना घंटों घंटों विचार विनिमय हुआ. महाराज से पं. व्यास का अंतरंग आत्मीय संबंध यूं तो सन 1934 से था मगर इस संबंध में ज्योतिष ही प्रमुख कड़ी थी. यह पहला अवसर था जब उन्होंने एक अन्य विशिष्ट विषय पर चर्चा की.

महाराजा का विचार 'विक्रम उत्सव' के लिए पचास लाख की धन राशि एकत्र कर अनेक महत्वपूर्ण कार्य आरंभ करना था. विश्वविद्यालय के लिए धनराशि शासन की ओर से दी जानी थी. इसके सिवा उज्जैन के प्रमुख धार्मिक स्थान और ऐतिहासिक स्थानों के सुधार के लिए शासन के अनेक विभागों द्वारा सहयोग देने का निश्चय किया गया. तदनुसार महाकाल मंदिर, हरसिद्धि मंदिर और क्षिप्रा तट पर सुधार कार्य आरंभ हो गए थे. जहां जहां ये सुधार कार्य हुए वहां पं. व्यास ने, जो स्वयं संस्कृत के सुकवि थे, यह श्लोक अंकित करवा दिया था 'द्वि सहस्त्रमिते वर्षे चैत्रे विक्रम संवत्सरे, महोत्सव सभा सम्यक: जीर्णोद्धारमकारयत.'

जैसे जैसे समारोह का कार्य प्रगति कर रहा था, देश के विभिन्न भागों में

एक सांस्कृतिक वातावरण बन गया था. लगभग उसी समय पत्र पत्रिकाओं में रवींद्र बाबू और निराला ने भी 'विक्रम' पर कविताओं का सृजन किया था. रवींद्र बाबू की 'दूर, बहुत दूर क्षिप्रा तीरे' और निराला की 'द्विसहस्त्राब्दि' कविता पठनीय ही नहीं, संग्रहणीय भी हैं. हिंदू महासभा के तत्कालीन अध्यक्ष के समर्थन और सहयोग से सारे देश में चेतना फैली थी. इसी दौरान मियां जिन्ना ने अपने भाषण में इस उत्सव का विरोध किया. जिन्ना के विरोध से सरकार के भी कान खड़े हो गए. चूंकि वह समय भी ऐसा था, विश्व युद्ध के आसार सामने थे, ब्रिटिश सरकार चौकन्नी हो गई. उन्हें पं. व्यास के इस आयोजन में क्रांति या विद्रोह की बू दिखी, क्योंकि एक साथ 114 देशी महाराजा एक जगह 'विक्रम उत्सव' के नाम पर इकठ्ठा हो रहे थे. नि:संदेह इस पर्व रंग में पं. व्यास की यह परिकल्पना भी छुपी थी. शौर्य और विक्रम उत्सव के इस उत्सव के अवसर पर हमारे खोये बल, पराक्रम की चर्चा देशी राजाओं के रक्त में उबाल अवश्य ले आएगी. वैसे इस आयोजन में हिंदू मुस्लिम भेद भाव को कोई जगह नहीं थी किंतु जिन्ना के विरोध से वातावरण में विकार पैदा हो गया. उस समय पं. व्यास ने नवाब भोपाल को शासकीय स्टार पर समारोह मनाने के लिए लिखा. नवाब ने अपने कैबिनेट में योग्य विचार करने का आश्वासन दिया. चेतना फ़ैल रही थी, जागृति फ़ैल रही थी. मुंबई (तब बंबई) में बड़े पैमाने पर ये समारोह आयोजित किया गया. देश की हज़ारों सभा, संस्थानों ने कार्यक्रम की तैयारी की.

लगभग उसी समय प्रख्यात फिल्म निर्माता निर्देशक विजय भट्ट ने पंडित व्यास के आग्रह पर 'विक्रमादित्य' सिनेमा का निर्माण आरंभ किया जिसके संवाद, पटकथा और गीत लिखने का कार्य भी उन्होंने व्यास जी के परामर्श से किया. इस फिल्म में विक्रमादित्य की मुख्य भूमिका भारतीय सिनेमा जगत के महानायक पृथ्वीराज कपूर ने निभाई थी. पृथ्वीराज जी उस समय पं. व्यास के आवास 'भारती भवन' में ही ठहरे थे. तब से जो आत्मीयता दोनों के मध्य स्थापित हुई वह अंत तक बनी रही. बाद के दिनों में पृथ्वीराज कपूर जी ने 'कालिदास समारोह' में अपनी नाटक मंडली को ला कर स्वयं नाटक भी किये और अपने से होने वाली सारी आय कालिदास समारोह के लिए प्रदान कर दी.

उज्जयिनी में प्रति बारह वर्षों में सिंहस्थ पर्व मनाया जाता है. 1945 में जब सिंहस्थ पर्व आया तब देश भर के असंख्य आचार्य, संत साधु, संत महंत, उज्जयिनी आये तब पं. व्यास जी ने अपने व्यक्तिगत संपर्कों से प्रयास कर उन्हीं के नेतृत्व में विक्रम महोत्सव तीन रोज़ तक मनाया. साधु संतों के 121 हाथियों, लाजमों, लवाजमों के साथ लाखों लोगों की उपस्थिति में तीन दिनों तक भव्य आयोजन महत पैमाने पर मनाया गया. देश भर में विक्रमादित्य का बहुत सा साहित्य विविध भाषाओं में प्रकाशित हुआ. देश भर में सांस्कृतिक लहर आ गई. 'विक्रम द्विसहस्त्राब्दी समारोह समिति' ने भी 'विक्रम स्मृति ग्रंथ' का प्रकाशन किया, जैसा कि प्राय: महाभारत के बारे में कहा जाता है कि जो महाभारत में है वही भारत में है और जो महाभारत में नहीं है वह कहीं भी नहीं है। वैसा ही वृहदाकार तीन भाषाओं में यह ग्रंथ प्रकाशित हुआ.

क्या किसी नगर के इतिहास में ये कम महत्वपूर्ण घटना है कि पद और अधिकार से वंचित एक व्यक्ति ने एक पूरे शहर को एक युग से दूसरे युग में रख दिया. व्यास जी ने विक्रम, कालिदास या उज्जयिनी के नाम पर मंदिर, मठ नहीं बनवाये अपितु शिक्षा, अनुसंधान और कला संस्कृति के शोध संस्थान और विश्वविद्यालय का निर्माण करवाया. आज के विक्रम विश्वविद्यालय के कुलपति भी शायद ये नहीं जानते कि विक्रम विश्वविद्यालय बना कैसे? वे पंडित व्यास का नाम हटाकर विक्रम को चक्रम में पहले ही बदल चुके हैं। विक्रम आज उनके भ्रष्टाचार से ग्रस्त त्रस्त है.

हालांकि व्यास जी की ये प्रक्रिया समाज को भरने के प्रयास में खुद को खाली करने की रही. आज जब भारत को आज़ाद हुए 75 वर्ष से भी ऊपर होने जा रहे हैं, आज भी अपने साहित्यिक सांस्कृतिक मूल्यों और अवदानों से हम कितने अपरिचित हैं. तरस आता है हमारे राष्ट्र के कर्णधारों पर जो राष्ट्र को 21वीं शताब्दी में ले जाने की बात तो करते हैं, वे ईसा, सन संवत से तो सोचते हैं, संभवत: इन 'शक' और 'हूंण' वंशजों को यह ज्ञात नहीं होगा कि हम 21वीं शताब्दी में बहुत पहले से ही मौजूद हैं.

'हिन्दुस्तान' एवं 'पंजाब केसरी', 'नई दुनिया' इस देश में ऐसे राष्ट्रीय समाचार पत्र हैं जो अपने मुख पृष्ठ पर विक्रम ससंवत को ही प्रमुखता देते आये हैं. मेरे व्यक्तिगत अनुरोध को स्वीकार कर स्व. राजेंद्र माथुर (तत्कालीन संपादक) ने नव भारत टाइम्स के मुख्य पृष्ठ पर विक्रम संवत देना आरम्भ कर दिया था. मगर अभी भी कानों में कोई पिघला हुआ सीसा डालता है जब हम प्रात: आकाशवाणी से रेडियो के कान उमेठते ही सुनते हैं' आज दिनांक .... है, तदनुसार शक संवत .....'. ■

बुंदेलखंड की बुड़की

विनीता गुप्ता

भारत में मध्यप्रदेश का एक हिस्सा बुंदेलखंड कहलाता है. बुंदेला शासकों के द्वारा इस भूमि पर शासन करने के कारण इसे बुंदेलखंड कहा जाता है. इस क्षेत्र के अंतर्गत झाँसी दतिया छतरपुर टीकमगढ बांदा महोबा आदि ज़िले आते हैं.

बुंदेलखंड में मकर संक्रांति

हिंदू कैलेंडर के माघमास में यह त्योहार मनाया जाता है, सूर्य जब धनु राशि से मकर राशि में प्रवेश करते हैं और सूर्य उत्तरायण हो जाते हैं तब उस संक्रमण काल को मकर संक्रांति कहा जाता है. यह पर्व अंग्रेज़ी कैलेंडर के अनुसार 14 जनवरी को मनाया जाता है. इस पर्व से जुड़ी अनेक पुरातन कथाएं हैं. महाभारत काल में भीष्मपितामह ने बाणों की शैय्या पर लेटे हुए सूर्य के उत्तरायण होने तक प्राण त्यागने की प्रतीक्षा की थी, भागीरथ गंगा मैया को इसी दिन पृथ्वी पर लाये थे और भी कई पौराणिक कथाएं हैं.

यह एक बड़ा और महत्त्वपूर्ण त्योहार माना जाता है. वैसे तो इसे समस्त भारत में मनाते हैं लेकिन बुंदेलखंड में यह त्योहार बहुत ही पारंपरिक तथा उल्लासपूर्ण तरीके से मनाया जाता है और इसे 'बुड़की' कहते हैं. इस त्यौहार में नदी या सरोबार में डुबकी लगाकर स्नान का बड़ा महत्व है, संभवत: बुड़की शब्द डुबकी से निकला हो.

सुबह स्नान करने के लिए लोग पास के सरोबर या पवित्र नदियों की ओर जाते हैं. जो नहीं जा पाते उनकी बुड़की भी मग्गाबाल्टी या शावर वाले रोज के स्नान की तरह ही होती है. स्नान कहीं भी हो पहले शरीर पर टिल का उबटन किया जाता है. इसके लिए तिल को पीसकर उबटन

बनाते हैं. तिल की प्रकृति उष्ण होती है और शरीर में ये स्निग्धता लाती है. स्नान कर के सूर्य भगवान को जल पुष्प तिल से अर्ध्य दिया जाता है। और नए वस्त्रों को धारण किया जाता है. फिर पूजा के बाद निकाला जाता है दान जिसमें खिचड़ी, तिल के बने व्यंजन और कुछ धन राशि हुआ करती है। इस सबके उपरांत ही कुछ खाया जाता है.

बुड़की पर मुख्य रूप से बनने वाले पकवानों को तो सोच कर ही मुंह में पानी आ जाता है. इस अवसर पर काले और सफेद दोनों प्रकार का तिल

जिसे तिली भी कहते हैं विशेष महत्व का है. तिल और गुड की चाशनी से बने लड्डू और तिल को भूनकर गुड के साथ खल बट्टे में अदरक डालकर कूट कूट कर बने हुए लड्डू, तिल गुड़ की पट्टी, और रेवड़ी की तो बात ही कुछ और है. घर घर दस बारह दिनों पूर्व से पकवान बनना प्रारंभ हो जाते हैं. राम दाना, लाइ(मुरमुरे) मूंग दाल की पीठी, मोटे सेव के गुड़ पगे लड्डू, आटे मेवे गुड़ के लड्डू और भी कई तरह के पकवान जैसे सेव, पापड़ी, आदि. बुड़की के एक दिन पूर्व तिलैया मनाई जाती हैं, जिसमें तेल से बनी जैसे मूंग की दाल के मंगोड़े, गुलगुले (गेहूं के आटे और गुड़ सौंफ सोडा मिलाकर बनायी गयी पकौड़ी), मालपुए आदि बनाए जाते हैं.

बुड़की का त्योहार आते ही बाजार सज जाते हैं। गड़ियां घुल्ला (शक्कर से बने खिलौने हाथी, घोड़ा, तोता आदि) दुकानों पर बिकते नज़र आते हैं. कहते हैं कि ये महाभारत काल से चली आ रही परंपरा है जिसमें राजा के द्वारा प्रयुक्त जानवरों को शक्कर से बनाया जाता था जो मुंह में आसानी से घुल जाते हैं. शक्कर के ये खिलौने कई रंगों का उपयोग कर बनाये जाते हैं. साथ ही मिट्टी से बने घोड़े और गाड़ी भी बाजारों में बिकते हैं. घोड़ों की पूजा करने के लिए एक लाल कपड़े की सहायता से ऐसी थैली बनाई जाती है जिसमें दो थैलियां बीच से जुड़ी होतीं हैं ताकि इसे घोड़े की पीठ पर इस तरह रखा जा सके कि दोनों ओर पकवान भरकर लटकाना संभव हो सके, इसे 'कठारी' कहते हैं.

मेलों का आयोजन भी होता है. रंग बिरंगी पतंगों से आसमान सज जाता है. बुंदेलखंड का मकर संक्रांति पर गाया जाने वाला गीत लमटेरा कहलाता है जो शिव के प्रति निष्ठा का गीत है.

महादेव बाबा हो.

महादेव बाबा गौरा के सजनवा रे... गौरा के सजनवा रे...

ब्रह्मा बिस्नू तुम्हरो लगावे ध्यान रे...

गौरा पटरानी बनीं रे ,पटरानी बनी रे...

भोले बाबा बरदानी भये,

जीने मांगों सो दै दओ बरदान रे...

महादेव बाबा हो.

गरो उनकों नीले तो भयों रे...

जब ते कर लओ बिसपान रे...

अरे भोले बाबा हो.

चलो भैया जटा शंकर चलिये रे...चलो चलिए रे....

कुंड प्यारे शीतल तो भरें हो

जाके कर लो दोई से स्नान हो

कुंड प्यारे हो...

लगन मेरी भोले से लगी रे...

चरन बंदन करें सौ सौ बार हो.. लगन मोरी लगी हो.

भंग धतूरा चढ़ाये भोले बाबा को...

भंग चढ़ाये हो तिली के लडुआ हो...

महादेव बाबा हो.... ■

इस बार 'वान' में क्या देंगे?

शरद कोकास

मकर संक्रांति के आगमन से एक सप्ताह पूर्व यह प्रश्न हमारे घर की संसद में उठाया जाने लगता इस बार 'वान' में क्या देंगे या क्या देना है? आप लोगों के लिए 'वान' यह शब्द नया होगा इस शब्द तक पहुंचने के लिए इसकी पृष्ठभूमि बताना आवश्यक होगा.

मकर संक्रांति पर्व के विषय में हम सब जानते हैं. यही एकमात्र ऐसा पर्व है जिसे सौर कैलेण्डर के आधार पर मनाया जाता है, बाकी सारे तीज त्यौहार होली, दिवाली, ईद आदि मनाने का क्रेडिट तो चांद के हिस्से में आ जाता है.

सूर्य एक अच्छा बॉस है. समय पर अपने दफ्तर में आता है और समय से जाता है. पूरे तीन सौ पैंसठ दिनों तक एक जैसा क्रम. हां यह जरुर होता है कि सर्दी के दिनों में वह थोड़ा शॉर्टकट वाले रास्ते से आता है और गर्मी के दिनों में थोड़ा लंबा रास्ता अख्तियार करता है यानि सर्दियों में दक्षिण की ओर वाला रास्ता और गर्मियों में उत्तर की ओर वाला रास्ता. मकर संक्रांति का दिन उसके रास्ता बदलने वाला दिन होता है, पंडितों की भाषा में कहें तो दक्षिणायन से उत्तरायण में आने का दिन.

सूर्य के आने जाने का रूपक सदियों से चला आ रहा है लेकिन हम सब जानते हैं कि सूर्य न कहीं आता है न जाता है, पृथ्वी ही दीवानी की तरह उसके इर्द गिर्द घूमती रहती है और अंडाकार या दीर्घ वृत्ताकार पथ में होने के कारण कभी दूर चली जाती है तो कभी पास आ जाती है गोया कि छह माह उत्तर की ओर झुकते हुए चलती है

और छह माह दक्षिण की ओर. इस तरह सूरज के राह बदलने के रूपक में कहें तो यहां रास्ता ही अपना रास्ता बदल लेता है.

प्रकृति के हर परिवर्तन को उत्सव के रूप में संपन्न करने वाले हमारे देश में यह दिन मकर संक्रांति के रूप में मनाया जाता है. ग्रेगोरियन कैलेण्डर के अनुसार प्रत्येक वर्ष की चौदह जनवरी को आनेवाली यह तिथि अपने धर्म के कैलेण्डर के अनुसार नववर्ष का उद्घोष करने वालों के प्रकोप से अब तक बची हुई है. यद्यपि चांद की भांति सूर्य भी विश्व की अनेक सभ्यताओं में एक देवता है और यह दिन उसके धनु राशि से मकर राशि में आने का दिन माना गया है इसलिए इसे मकर संक्रांति कहते हैं.

चूंकि सूर्य तो देश के सभी प्रांतों में निकलता है इसलिए देश के अलग-अलग प्रांतों में इस दिन को अलग-अलग नाम से जाना जाता है. सामान्यत: इसे संक्रांति या मकर संक्रांति कहते हैं, तमिलनाडु में

यह पोंगल कहलाता है. हमारी दादी मां दो ऋतुओं के इस मिलन पर्व को उत्तर प्रदेश की शब्दावली में खिचड़ाई कहती थी. इस दिन घर में खिचड़ी पकना अनिवार्य था.

मां झांसी से आई थी और उन्हें पता नहीं था कि महाराष्ट्र में इस दिन हल्दी कुंकुम की परम्परा है. पहले दूसरे साल तो उन्हें समझ में नहीं आया कि पड़ोस की औरतें उनसे क्यों कहतीं हैं 'कोकास बाई, आज आमच्या घरी हल्दी कुंकु साठी या.' अर्थात कोकास बाई आज हमारे घर हल्दी कुमकुम के लिए आइये. मां यू पी की थीं, जब उन्होंने अपने नाम के साथ बाई सुना तो उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ. बाद में पता चला कि महाराष्ट्र में बाई शब्द बहुत सम्मान सूचक है. हमारे पड़ोस में बाद में एक स्कूल भी खुला उसका नाम था 'इंदिरा बाई गांधी प्राथमिक शाला.' हल्दी कुमकुम के लिए पहली बार जब वे पड़ोस में गईं तो उनके यहां से उपहार में बेर, तिल्ली के लड्डू, कच्चे चावल के साथ स्टील का एक चम्मच लेकर आईं, उन्होंने बताया कि यह 'वान' है.

ऐसा कहते हैं कि वान की परम्परा महाराष्ट्र में पेशवाओं के समय से चली आ रही है. उन दिनों जब घर के पुरुष युद्ध के लिए निकलते तो महीनों घर नहीं लौटते थे. राज्य की ओर से प्राप्त सहायता से उनका घर खर्च तो चल जाता था लेकिन वे अपना अकेलापन कैसे दूर करें, अत: उन्होंने हल्दी कुमकुम के बहाने मेल मिलाप का यह तरीका ढूंढ निकाला. महिलाऐं एक दूसरे के घर जातीं, आपस में हल्दी कुमकुम लगातीं और एक दूसरे के सुहाग की कामना करतीं. हल्दी कुमकुम के अलावा दिन के तिल तिल बढ़ते जाने के प्रतीक के रूप में वे तिल, मौसम के बेर, फल, फल्लियां और अनाज भी एक दूसरे को देतीं थीं, साथ ही उपहार के रूप में घर में काम आने वाली कोई वस्तु, या वस्त्र भी प्रदान करतीं. यही उपहार 'वान' कहलाया.

जैसे जैसे समय बदलता गया वान की वस्तुऐं भी बदलती गईं पहले वान में सुहाग से जुडी चीज़ें जैसे काजल, कुमकुम की डिब्बी, चूड़ियां आदि दी जाती थीं फिर स्टील के चम्मच, कटोरियां, प्लास्टिक के डिब्बे डिब्बियां दी जाने लगीं.

माह भर चलने वाला हल्दी कुमकुम यह कार्यक्रम इस तरह आयोजित किया जाता कि प्रतिदिन तीन या चार महिलाओं के घर में यह कार्यक्रम होता. बुलौव्वा देने की ज़िम्मेदारी बच्चों पर सौंप दी जाती आज हमारे घर सायं चार बजे से हल्दी कुमकुम का कार्यक्रम है, आप सादर आमंत्रित हैं, इस आशय का एक सूचना पत्र अर्थात एक कागज़ लेकर हम बच्चे निकलते और कागज़ में दी गई लिस्ट के अनुसार घर घर जाकर आंटियों से साइन करवाकर लाते और मां को सौंप देते.

इस तरह महिलाओं की संख्या के अनुसार आयोजन की व्यवस्था की जाती. हम बच्चे हरकारे का यह काम खुशी खुशी करते थे. घर से मिलने वाले पारिश्रमिक के अलावा आंटियों के घर से मिलने वाले टॉफ़ी बिस्किट का मोह तो होता ही था. जिस आंटी के घर से कुछ नहीं मिलता उन्हें हम ब्लैक लिस्ट में डाल देते और अगली बार उनके घर जाने से कन्नी काट लेते.

घर के पुरुष अक्सर इस आयोजन के समय अपना टाइम पास मोहल्ले के नुक्कड़ पर या बाज़ार में करते. बाबूजी कार्यक्रम शुरू होने से पूर्व तक इस काम में मां का बराबर सहयोग करते थे, जैसे बाज़ार से वान की वस्तु लाना, बेर, पोपट की फल्ली, अनाज, तिल आदि लाना. बाबूजी हर बार कुछ इनोवेटिव वस्तुऐं वान के लिए लाते जैसे एक बार वे सबको देने के लिए पंद्रह पैसे वाला पोस्टकार्ड लेकर आये थे.

जाने कितने वर्ष बीत चुके लेकिन महाराष्ट्र में वान की यह परम्परा जारी है बल्कि अब गोवा, गुजरात, मध्यप्रदेश, राजस्थान में भी यह पर्व प्रारंभ हो चुका है. बच्चों का हरकारे वाला काम अब व्हाट्स एप कर देता है वान की वस्तुऐं भी बदलती जा रही हैं उसमे पौधों के गमले, चाबी के गुच्छे, परफ्यूम, लिपिस्टिक जैसी चीजें शामिल हो गई हैं. यू ट्यूब पर बाकायदा वीडियो अपलोड किये जाते हैं कि इस साल और क्या क्या नई वस्तुऐं दे सकते हैं. संभवत: अमेजोन फ्लिप्कार्ट जैसे ऑनलाइन शॉपिंग वालों ने भी अब इस तरह की योजनाऐं शुरू कर दी हैं. बाज़ार हर भावना को इनकैश करना जानता है.

यदि आपके घर में हल्दी कुमकुम का आयोजन हो तो 'वान' में आप क्या देना पसंद करेंगे ? ■

प्रयागराज कुंभ की यादें

विजय कुमार अग्रहरि 'आलोक'

प्रयागराज कुंभ 2019 की यादें. अद्भुत अनुभव! प्रयागराज की सड़कों पर तमाम पैदल लोग बस बढ़ते जाते हैं. माथे पर गठरियां लादे. किसी को शायद ही पता है कितना चलना है, किस रास्ते चलना है. बस भीड़, भीड़ को ले जा रही है. आगे सड़क पर बैरियर है, मतलब आगे से मुड़ना है. पुलिस के जवानों का चरित्र बदला सा नजर आता है. अभी रात्रि के 2:30 बजे हैं. पता नहीं कब से खड़े होंगे पर हर पल तत्पर कि किसी तीर्थयात्री की कोई सहायता कर पुन्य लाभ कमा पाते. आज उनकी भाषा शैली भी बदली हुई जान पड़ती है. कहते हैं मौनी अमावस्या के दिन मुख से नकारात्मक शब्द नहीं निकालने चाहिए. हो सकता है यही कारण हो.

शहरी भीड़ और ग्रामीण भीड़ में साफ अंतर उनके पहनावे के अलावा उनके लगेज को देखकर भी कर सकते हैं. जहां शहरी भीड़ छोटे छोटे ग्रुपों में हैं और अटैचियां संभाले हैं या ट्रालियां खींच रहे

हैं, ग्रामीण जत्थे बड़े है और कोई जवान ऐसा नहीं है जिसके सिर पर एक बोरी (बहुधा सफेद प्लास्टिक के तारों वाली) न हो. उत्सुकता होती है कि इन बोरियों में समान्य तौर पर रहता क्या होगा? निगाहों से टटोलने की कोशिश की तो पता लगा कि बरतन हैं, कुछ खाद्य भी होगा ही, कच्चा या पका. कमाल का जीवट है इस ग्रामीण सैलाब में. बच्चे, बूढ़े, जवान सभी चले जा रहे हैं.

हर बस स्टैंड से, इस बाढ़ में एक नदी और जुड़ती है. प्रीतम नगर से निकलते हुए पैदल यात्रियों का पहला सैलाब मिला था नेहरू पार्क पर. सरायअकिल, सिराथू, मंझनपुर, चरवा साइड से आती हुई बसें नेहरू पार्क पर ही पड़ाव करती हैं. कभी ये सभी नाम बड़े घरेलू हुआ करते थे मेरे लिए. अब 33 वर्षों के प्रवास के बाद इनका नाम जुबान पर आकर कुछ देर ठहरता है मानो बिछड़े मित्र से एक पल और रुक कर मिलना चाहता हो.

मनौरी में इंटर तक पढ़ा था. चरवा में इंटर का सेंटर गया था. पर अब सब कौशाम्बी नाम के नए जिले में चले गए है. अब इलाहाबाद भी तो प्रयागराज हो गया है. तीस बतीस साल में नज़रें भी बदल गयी हैं और नज़ारे भी. बहरहाल, नेहरू पार्क से संगम (त्रिवेणी) तकरीबन 12 किमी होगा. आज तारीख 4 फरवरी को रात 2:30 बजे सड़क पर केवल और केवल पैदल यात्री हैं. 'कुंभ शटल सेवा' जो कल तक सड़क पर आम थी, आज एकदम बंद हो जाने से सड़क की पहचान बदल सी गयी है. यहां से संगम तक पैदल ही चलना हैं इन यात्रियों को पर कहीं कोई शिकायत नहीं बल्कि उत्साह छलक रहा है चतुर्दिक.

कल 3 फरवरी को लखनऊ से आते हुए बस को फाफामऊ के बेलाकछार पर रोक दिया गया था. हमें बताया गया कि अब यहां से 'कुंभ शटल' लेनी होगी. सुबह के सात बजे थे, मेरे साथ दिक्कत थी कि मुझ विकलांग को अधिक दूर पैदल चलना मुश्किल था. पहले ओला बुलाने की कोशिश की पर ओला को कछार में टेंपरेरी बनाए गए बस अड्डे का लोकेशन समझाना मुश्किल हो रहा था. जीपीएस फालो करने से वो इंकार कर रहा था और उपलब्धता भी मात्र एक ही थी सो कदमताल शुरू किया. सुबह की बेला में कछार में पैदल चलना सुखद लगा रहा था. शांतिपुरम कालोनी में चहल कदमी करते बुजुर्गों ने बताया कि आगे शटल पकड़ लीजिए. मैने बताया मुझे अभी तो घर जाना है कल मौनी अमावस्या पर ही स्नान करुंगा. बुजुर्ग ने बताया कि कहीं जाना हो बस 'कुंभ शटल' पकड़ लीजिए. बात बहुत समझ में तो नहीं आयी पर सामने आती शटल को हाथ देकर बैठ गया.

धीरेधीरे भीड़ का दबाव बढ़ता जा रहा था. शायद हम त्रिवेणी संगम के नजदीक आ रहे थे. पर शायद अब भी बहुत दूर थे. बढ़ती भीड़ बताती थी कि गंतव्य पास है पर गाड़ी की लगातार मंथर होती गति आभास देती थी कि बेहतर होता पैदल ही चल रहा होता. पहली बार पैदल यात्रियों को बस को पार करते देख रहा था. कुछ बुजुर्ग महिलाएं बस पर चढ़ने की ज़िद करती, ड्राइवर खीझता पर कंडेक्टर कुछ को उठा ही लेता. धीरे धीरे बस भी विवश हो रही थी. न बाहर जगह थी, न अन्दर. फिर भी बस का दरवाजा बंद न करने की चेतावनी बाहर लाउडस्पीकर पर लगातार चल रही थी. हमारे पीछे भी बहुत सी बसें होंगीं पर क्या पता किस हाल में होंगीं ? नदी की तस्वीर उभरने लगी थी. नहीं, पानी दीख नहीं रहा था लेकिन लोगों का आगे ढ़लान लिए संकरी गलियों में उतरते जाना तो यही आभास दिलाता था कि संगम पहुंच रहे हैं शायद. बहरहाल, थोड़ी दूर आगे चौड़ी सड़कें देख संतोष हुआ. भीड़ कम,

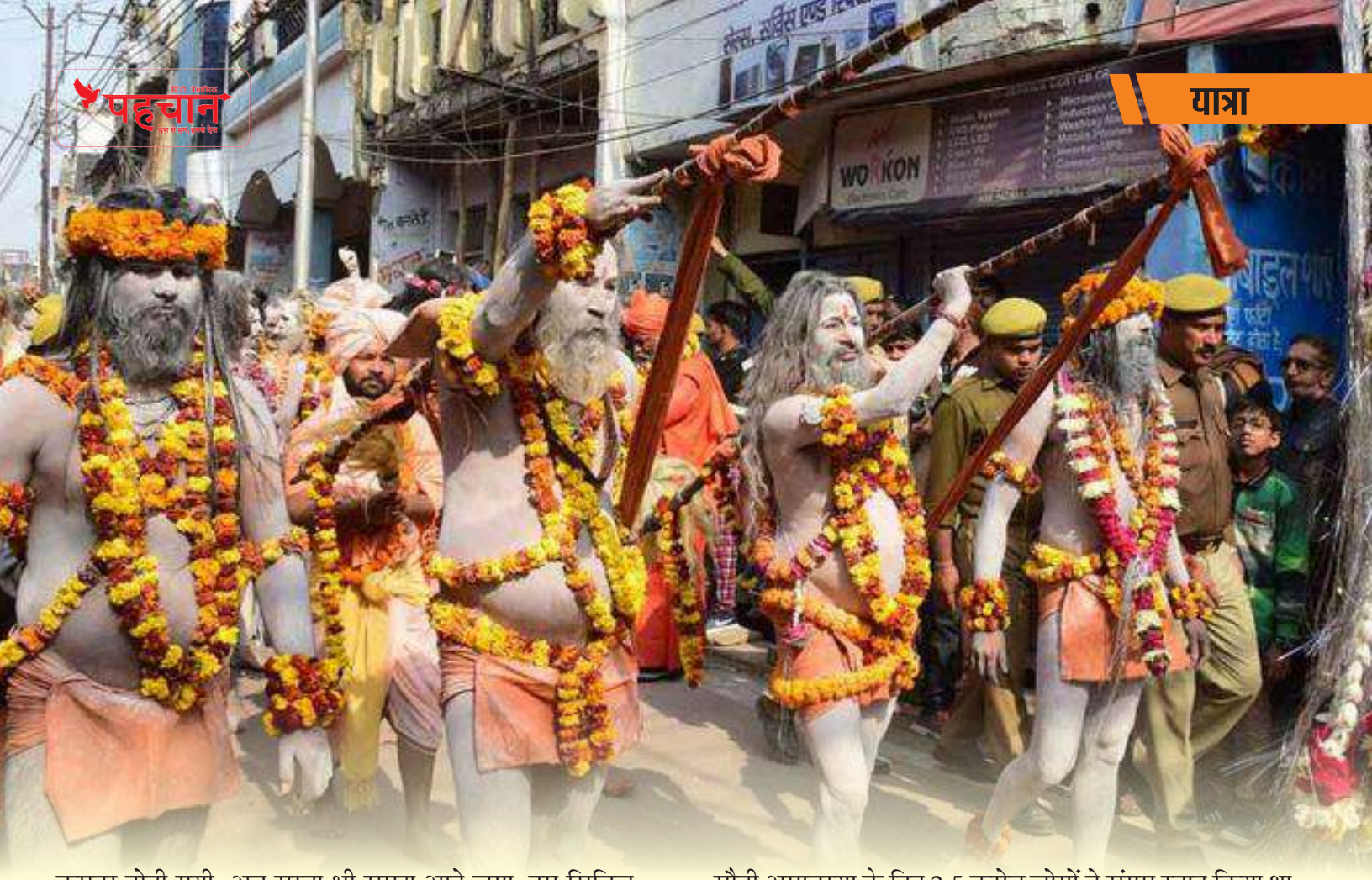

कमतर होती गयी. अब रास्ता भी समझ आने लगा. हम सिविल लाइंस की ओर बढ़ रहे थे. मैने बहनोई को फोन किया. सिविल लाइंस पर भीड़ का रेला देखने लायक था. घर पहुंच कर डिसाइड हुआ कि रात 2 बजे हम बाइक से संगम निकलेंगे क्योंकि 4 बजे सुबह से दोपहिया भी बंद हो जायेगी. कल कुंभ का बड़ा स्नान था 'मौनी अमावस्या'. जो सोमवार को पड़ने से और भी ख़ास हो रहा था.

प्राय: कुंभ में अपने गृह जनपद इलाहाबाद, अब प्रयागराज आ ही जाता हूँ पर इस बार कुंभ की नगरी कुछ अलग ही रंग में दिख रही थी. कल घर आते हुए इलाहाबाद के हर पुल और प्रमुख दीवारों को भित्ती चित्रों से खिला खिला सा देखा था पर आज संगम जाते हुए ध्यान से देखा पौराणिक कथाओं को चित्रों के माध्यम से स्नानार्थियों तक संप्रेषित करने का सार्थक एवं कलात्मक प्रयास किया गया था जो कुंभ के वातावरण को और भक्तिमय बना रहा था. घाट पर पहुंच कर एक बुजुर्ग महिला रिश्तेदार के टेंट में पहुचा जो वहां कल्पवास कर रही थीं. वहां रहते हुए आस पड़ोस का जो भ्रमण किया, सच कहूं एक दिव्य अनुभूति थी. सुना है उस दिन मौनी अमावस्या के दिन 2.5 करोड़ लोगों ने संगम स्नान किया था पर फिर भी इतना बेहतर इंतजाम था कि न कहीं भीड़ का रेला, न धक्कम धुक्की, जो प्राय: कुम्भ में आम बात होती है.

परिसर फैला दिया गया था शायद. जन समुद्र जरूर था पर समुद्र में कही विछोभ नहीं था. इतने बड़े जन सागर को इतने संतुलित ढंग से संयोजित किया गया था किसी के भी दांतों तले उंगली आ जाने की बात थी. कहीं कोई गंदगी न थी, न प्रत्यक्ष न परोक्ष. जगह जगह पर मोबाइल चार्ज करने को टावर बने थे. थोड़ी थोड़ी दूर पर पानी की पाइप के साथ शौचालय की व्यवस्था थी. कुछ टेंट फाइव स्टार श्रेणी के भी दिख पड़े जो धनकुबेरों और गणमान्यों हेतु बनाए गए थे. कुछ परिसर हाई टेक बाबाओं के भी थे. जहां एक अलग भारत के दर्शन होते थे. आधुनिकता के मायाजाल में फंसे धनाढ्यों के आनंद की खोज की असफलताओं में पनपता हुआ एक सफल तथाकथित 'अध्यात्मिक' व्यवसाय. जिसको जहां राम दिख जाय. मेरी ललक तो संगम में डुबकी लगाने की थी. वह सकुशल, सोल्लास संभव हो सकी. ■

डॉ. निधि सिंह

जय- जय शारदा

वागीश्वरी शुभदायिनी त्रैलोक्यपूजित सर्वदा.
मां वेदरूपिणि वीणापाणी जयतु जय जय शारदा.
हे शंख पुस्तक पद्म शोभितकर धवल पद्मासना.
शुभदायिनी भगवती कीजे सर्वसिद्ध उपासना.
जय पद्मनयना पद्मवंशा पद्मरूपा पद्मदा.
मां वेदरूपिणि वीणापाणी जयतु जय जय शारदा.
हे शान्तरूपा विश्वरूपा ब्रह्मपत्नी भगवती.
सदज्ञान रूपा सर्वरूपा वाग्देवि सरस्वती.
वेदादि वाङ्मय सार विद्या बुद्धि की दात्री सदा.
मां वेदरूपिणि वीणापाणी जयतु जय जय शारदा.
सब ज्ञान की आगार नाना शास्त्ररूप तपस्विनी.
अघनाशिनी वरदायिनी हे महादेवि मनस्विनी.
मोहित भ्रमित मति चित्तहित मंगलकरा हे अभयदा.
मां वेदरूपिणि वीणापाणी जयतु जय जय शारदा.

नमामि देवी भारती

हे पुण्य भूमि आज सकल संतति पुकारती,
सदैव मातृ भाव से ही पूर्णा संवारती.
समस्त जग उतारता रहे तुम्हारी आरती,
त्वदीय पाद पंकजं नमामि देवी भारती.

कहीं तो पर्वतों की श्रंखलाएं गगन तोलतीं,
चरण पखारने कहीं जलधि तरंग डोलतीं,
लगे वसुंधरा स्वयं ही नेह से दुलारती,
त्वदीय पाद पंकजं नमामि देवी भारती.

लगें प्रपात यूं की शिवजटा से धार हो बही,
सुरम्यता ज्यों स्वर्ग की हो मूर्त रूप ले रही,
जहां बयार डोलती फिरे ऋचा उचारती,
त्वदीय पाद पंकजं नमामि देवी भारती.

कि धो रही हैं केश गंग, जमुन और नर्मदा,
उन्हीं से पुष्ट शष्य सकल बन समस्त सम्पदा,
तुम्हीं में सकल सृष्टि निज स्वरुप को निहारती,
त्वदीय पाद पंकजं नमामि देवी भारती.

याद अपने गांव की

सुनील श्रीवास्तव

आ गयी फिर याद अपने गांव की क्यों कर भला?
हो गयी मुश्किल वहां पहचान की क्यों कर भला?
टूटी हुई लालटेन, ढिबरी बुझ गयी है अब वहां,
स्नेह और अपनत्व सब कुछ छिन गया क्योंकर भला?

***

गीत, मीत, संगीत न जाने कहां खो गये,
सोहर, पचरा, बिरहा भी अब फना हो गये,
नेनुआ, सरपुतिया, सेम, कोहड़ा लौकी अब,
सबकी बिरवाई से भी सब खफा हो गये.

***

दौड़तीं कारें, बुलेरो शान से देखा न था,
पट गये कुएं, नहर सोचा न था,
क्यों नहीं रोता किसी की मौत पर,
जो किसी के मौत पर सोता नहीं था.

खेत में उगने लगीं बंदूक की हैं गोलियां,
चहचहाती बेटियों की मौन होती बोलियां,
सर्द रातों में पसीने छूटते हैं घोंसले में,
जेठ की तपती दोपहरी, रो रही हैं डोलियां.

***

किस कदर बदला है अपना गांव, अब अपना नहीं है,
सूखी आंखों में किसी का लोर अब अपना नहीं है,
किस कदर खा गयी सड़कें कुछ दिनों में गांव को,
वह गया खा के कसम, गांव में रहना नहीं है.

***

फिर भी वह कुछ ढूंढने हर साल आता गांव में है,
अब भी पिघलती आग बरगद छांव में है,
क्या पता वह गांव अपने खोजता रहता हमेशा,
रेत की मछली, सिकुड़ती उम्र उसके पांव में है.

डॉ. भूपेंद्र बिष्ट

सिल बट्टा

कामयाब हो गई वह आवाज़ अब
जो माघ में भी सुनाई दे जाती थी
आषाढ़ में भी

संभल, बदायूं जैसे बढ़ते शहर के बाईपास किनारे
या 'आउटस्कर्ट' में बनती नई कॉलोनी के पिछवाड़े

इक ज़ईफ़ हुआ करता
कलपता, जाने खांसता
दबी हुई बेअसर आवाज़ में
'शील्ह लोढा कूटवा लो'.

पास में तीस, पैंतीस की धूलिमय श्यामा औरत
दो ठो बच्चा लिए हुए
सिलबट्टों पर ऊंघती
पीटती भी बालकों को आराम में ख़लल पर

कूटवा लो सिल कहने वाली वह आवाज़ न आती हो भले इधर
पर खारिज़ नहीं हुए अभी
घरजीवन से सिल बट्टे

दौलतखान के गैराज, गोदाम में कहीं डाल दिए गए हों
सिल और लोढ़ा, अलाहद और मुख्तल
लेकिन गरीबगुरबे अब भी संभाले हुए हैं हिफाज़त से
एक साथ,

सिल भी लोढ़ा भी
घर के किसी कोने अंतरे में

सदियों से
क्या क्या वनस्पति सिल बट्टे पर
पीस दी गई नमक के साथ
और भूख से जीती गई जंग
एक बेलौस, तुर्श, तीखी रंगत लिए

धन्य, सिल बट्टा ही आया काम
'बिस्वार' पीसने में
ऐपण के लिए
पूरण मासी या ऐसी ही दीगर तिथि त्यौहार पर

रसोई में पिसान वाले नए उपकरणों के रौरव पर
धूल धूसरित सिल बट्टा
हंसता तो है सांस साधे
लेकिन पशेमां है मन मेरा

किसी दिन चारपाई के नीचे से निकालकर
इस सिल बट्टे को नई पीढ़ी
कहीं ड्रॉइंग रूम में न कर दे आरास्ता
बतौर 'एंटीक पीस'
बेदखल किए जाने जैसा यह राज्याभिषेक होगा मर्मांतक.

डॉ. जी. के. शर्मा मृदुल

(1)
गंगा के घाट
चहकते थे कभी
देख कर भक्तों को.
ढोते हैं मौन
प्रदूषण का पंक
उपेक्षा का बोझ भी.

(2)
धरती माता
कब तक सहेगी
हमारी मनमानी.
सोचा है कभी
दोहराए न कहीं
प्रलय की कहानी.

(3)
सूखी सरिता
अनाहूत अतिथि
बेरोजगार युवा.
विधवा कन्या
रहते उपेक्षित
अपनों के बीच भी.

(4)
नि: स्वार्थ प्रेम
बांधता है स्वयं में
तस्वीर के फ्रेम सा.
रक्षा कवच
बन कर देता है
अपनत्व को धार.

(5)
दीपक जला
दौड़ पड़े पतंग
प्रियप्राकट्य पर..
अधरामृत
पीने को छक कर
मस्ती में झूम झूम.

(6)
गया था गांव
यादों की पोटली ले
बचपन को जीने.
मगर वहां
मिले सिर्फ अभाव
आदमी को जकड़े.

(7)
माया ठगिनी
फेर देती है बुद्धि
हर लेती देवत्व.
फेल हो जाता
काले कोट का तर्क
सफेद का कौशल भी.

नीलोत्पल

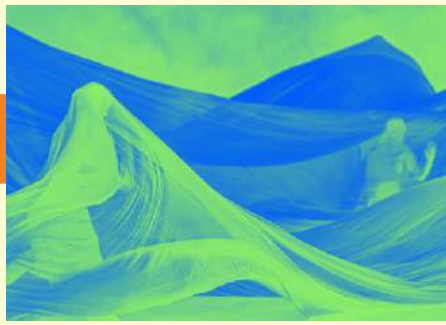

(1)
दिन भर हम युद्ध करते हैं
अपने जीने के साथ.
दिन भर हम भागते हैं
खुद से बचने के लिए.
दिन भर हम उलांघते हैं
अपने समय की अंतहीन दूरियां
दिन भर हम पाटते हैं
अधबने रिश्तों का अलगाव
दिन भर हम होते हैं
रेशारेशा, फाहाफाहा
दिन भर हम जो पाते हैं
वह हमारे भीतर
जोड़ता है कुछ
और तोड़ता भी
जिसके लिए अगले दिन
पुन: समर है.

(2)
जैसे जीवन के पन्ने पलटते हुए
पिछले पेज़ की स्मृति में
रह जाता हूं
शब्द और कविता
उसी स्मृति का क्षणिक हिस्सा है.

(3)
सबसे अच्छा जंगल
एक नदी के नीचे रहता है
सबसे अच्छा आदमी
एक औरत के स्वप्न में.

(4)
जिन्हें युद्ध चाहिए
अंत में मारे जाते हैं
जिन्हें युद्ध नहीं चाहिए
अंत में वे भी मारे जाते हैं.
युद्ध के बाद
कोई उम्मीद नहीं बचती.

(5)
जैसे जीवन के पन्ने पलटते हुए
पिछले पेज़ की स्मृति में
रह जाता हूँ
शब्द और कविता
उसी स्मृति का क्षणिक हिस्सा है.

(6)
आज की अच्छी बात है
मैंने प्रेम किया
हफ़्ते नहीं महीनों की बात है
मैंने सचमुच प्रेम किया
साल की ही नहीं
जीवन भर की बात है
मैं प्रेम करता रहा.

(7)
जिन्हें प्रेम
कभी समझ नहीं आया
वे ऐसे सफ़र के मुसाफ़िर हैं
जिनकी राह में
कोई स्टेशन नहीं पड़ता
अंत तक.

वेलेंटाइन दिवस पर विशेष

कुच्चू के लिए प्रपोज़ल्स

पल्लवी त्रिवेदी

वेलेंटाइन डे भारत का भले ना हो अब मनाया तो जाता है और सिर्फ दिन ही नहीं पूरा सप्ताह. अलग-अलग दिन, अलग-अलग महत्व. प्रपोज़ल डे पर पल्लवी त्रिवेदी की कलम से

कुछ प्रपोज़ल्स बरसों से तैयार हैं, बस केंडिडेट की कमी है.

'प्रपोज़ल्स' जाने कब कोई कुच्चू मिल जाए, जाने कब ज़रूरत पड़ जाए.

1.

जानते हो कुच्चू
तुमसे मिलने के बाद
सारी दुनिया बड़ी भली भली सी लगती है.
सारे रंग चटख दिखते हैं.
सारे कंठ मधुर सुनाई देते हैं.
सारी सूरतें सुंदर दिखाई देती हैं.
सारे नज़ारे हरे दिखाई देते हैं.
दुनिया की हर खटर पटर में लय महसूस होती है.
सारे बच्चे अपनी संतान नज़र आते हैं.
खुरदुरे स्पर्श, रेशम की छुअन में बदल जाते हैं.
मैं खुद को बड़ी अच्छी लगने लगती हूं.
और जानते हो?
ये सब तुमसे मिलने के बाद ही घटता है थोड़े से वक्त के लिए.
दरअसल तुम आंवला हो जिसे खाने के बाद हर पानी मीठा लगता है.
सुनो ना कुच्चू, मेरे आंगन में रह जाओ न आंवले का पेड़ बनके?

2.

ओ कुच्चू सुनो!
डर जाती हूं भीड़ भाड़ वाली सड़कों पर.
एक बड़ी उम्र पार कर ली,
सड़क पार करना न आया.
तुम्हारी उंगली पकड़कर जाने कितनी सड़कें पार की हैं
एक उंगली जिसमें पिता की उंगली थामने की सी बेफिक्री भी है
और प्रेमी के स्नेहिल स्पर्श की ऊष्मा भी.
जिसे थामते ही आंखों की ज़रुरत ख़त्म हो जाती है.
एक ही पकड़ दुनिया की
जो एक ही वक्त में सबसे कोमल और सबसे मजबूत
जो भरोसा भी है, उम्मीद भी और साथ का एहसास भी
यार, ज़रा ये जीवन भी पार कराओगे क्या?

3.

ऐ कुच्चू पता है?
एक आज़ाद चिड़िया भी अपने भीतर की एक हूक से बंधी होती है
नहीं तो भला क्यों लौटती शाम को अपने घोंसले की ओर?
जो बंधन जकड़े नहीं, मुक्त करे
वो सिर्फ प्रेम ही तो है
और जो रस्सी बने वो प्रेम नहीं, कैद है रस्सी की लंबाई की.
सुनो कुच्चू मेरे!
बस वोही घोंसला बनोगे मेरे लिए
पूरी दुनिया नापने के बाद सांझ ढले मैं जिसमें प्रेम की नींद सो सकूं?

4.

ओये कुच्चू!
जानते हो न तुम कितनी बार गड़बड़ा जाती है मेरी घड़ी
कभी जल्दी पहुंच जाती हूं, कभी देर से.
कभी बस छूटती है तो कभी मीटिंग
कमबख्त नब्ज़ पर बंधा वक्त नब्ज़ सा ही शरारती हो चुका है.
कभी सुस्त तो कभी रेसिंग कार सा तेज़.
इस मशीन के बिगड़ने से तो फिर भी काम ही छूटते हैं.
सिरफिरी नब्ज़ के बिगड़ने से ज़िन्दगी छूटने लगती है.
तुम मेरी वो घड़ी हो जो हमेशा सही वक्त बताती है.
तुम हो तो मेरा हर वक्त सही है.
तो सोचते क्या हो कुच्चू
बंधोगे मेरी धड़कती नब्ज़ पर सही वक्त बनकर?

5.

कुच्चू! कुच्चू! कुच्चू!
तुम हमेशा कहते हो कि तुम्हे चांद तक जाना है
तुम्हारी कविता में चांद, तुम्हारी ख्वाहिशों में चांद
ओ कुच्चू!
तुम्हारा चांद तो मेरी लग्न के पास वाले घर में बैठा है
तुम्हारे इंतज़ार में
बोलो तो, मेरी जन्मकुंडली का एक ग्रह बनोगे?

6.

कुच्चू मेरे!
मेरे साथ बस दो दिन बिताओगे?
पी.एस. चार दिन की जिंदगी है और दो दिन आलरेडी बीत चुके हैं.

गढ़ कुंडार का किला

कुमार रूपेश

गढ़ कुंडार देश के दुर्गम दुर्गों की श्रेणी में आता है. यह मऊ रानीपुर से 50 किमी दूर म.प्र. के निवाड़ी जिले में स्थित है. यह किला बेजोड़ कारीगरी के साथ साथ सामरिक दृष्टि से जंगल पहाड़ो के बीच होने से अजेय दुर्ग की श्रेणी में आता है.

इस किले का निर्माण खेतसिंग खंगार द्वारा कराया गया. पृथ्वीराज और खेतसिंह के पिता मित्रता के चलते खेत सिंह के संबंध भी पृथ्वीराज से प्रगाढ़ थे.

जब पृथ्वीराज ने महोबा के चंदेलों पर आक्रमण किया तब खेतसिंग उसके सैन्य प्रमुख थे. चंदेल, खेत सिंह के शौर्य के सामने टिक न सके.

बैरागढ़ के युद्ध मे ऊदल ने वीरगति पाई. पृथ्वीराज की विजय होने पर आल्हा , परमाल सहित कालिंजर चले गये. कहा जाता है कि आल्हा ने इसके बाद संन्यास ले लिया.

महोबा चंदेलों से जीत लिया गया. पृथ्वी राज ने विजय का श्रेय खेत सिंह खंगार को दिया तथा उनकी मातहती में विजित क्षेत्र छोड़कर दिल्ली चला गया. खेतसिंह खंगार पराक्रमी योद्धा के साथ साथ कुशल प्रशासक भी था.

खेतसिंग ने महोबा के बजाय गढ़ कुंडार को राजधानी बनाया, इस खंगार वंशीय राज्य की नींव रखी. उसी के पौते ने चंदेलों की सैन्य चौकी ज़िनागढ़ के स्थान पर दुर्ग का निर्माण सन 1180 में कराया.

खंगार वंश का अंतिम शासक मानसिंह की एक सुंदर राजकुमारी थी जिसका नाम केशर दे था. उसके रूप सौंदर्य की चर्चा दिल्ली तक थी.

मोहम्मद तुगलक ने राजकुमारी से शादी का प्रस्ताव भेजा जो मान्य नही हुआ. उसने सन 1343 ई. में गढ़कुंडार पर आक्रमण कर दिया. खंगारों की पराजय हुई.

राजकुमारी कैसर दे ने अन्य महिलाओं के साथ कुंए में कूद कर प्राण त्याग कर अपनी अस्मिता की रक्षा की. केसर दे की गाथा आज भी यहां के लोक गीतों में सहेज कर रखी गई है.

इस प्रकार मोहम्मद तुगलक ने विजित भू भाग सोहनपाल बुंदेला को सौंप दिया.

गढ़कुंडार से खंगार राज्य समाप्त होने के संबंध में यह भी कहा जाता है कि तत्कालीन खंगार राजा हुरमत सिंह के पुत्र नागदेव सोहनपाल बुन्देला की रूपवती कन्या से विवाह करना चाहता था.

सोहनपाल के राज़ी न होने पर हुरमत सिंह ने सोहनपाल को घेर लिया और विवाह के लिए भारी दबाव डाला जाने लगा. इस परिस्थिति से मुक्ति के लिए सोहनपाल ने युक्ति से काम लिया.

उसने विवाह का प्रस्ताव इस शर्त पर स्वीकार किया कि नागदेव संपूर्ण परिवार को बारात में लाएगा. इस बारात के स्वागत सत्कार में शराब में जहर मिला दिया गया.

तमाम वीर खंगार मरने लगे. हुरमत सिंह एवं नागदेव सहित सभी खंगार योद्धा मारे गए. तभी बुंदेलो ने परमारों से मिलकर हमला कर दिया जो भी शेष खंगार बचे तलवार के घाट उतार दिए गए.

गढ़ कुंडार से खंगार सत्ता का अंत हो गया. इस प्रकार बुंदेलों ने युक्ति पूर्वक गढ़कुंडार पर आधिपत्य कर लिया. इस तरह गढ़ कुंडार बुंदेलों के अधीन आया. बुंदेलों की राजधानी ओरछा स्थानांतरित होने तक गढ़ कुंडार बुंदेलखंड की राजधानी रहा.

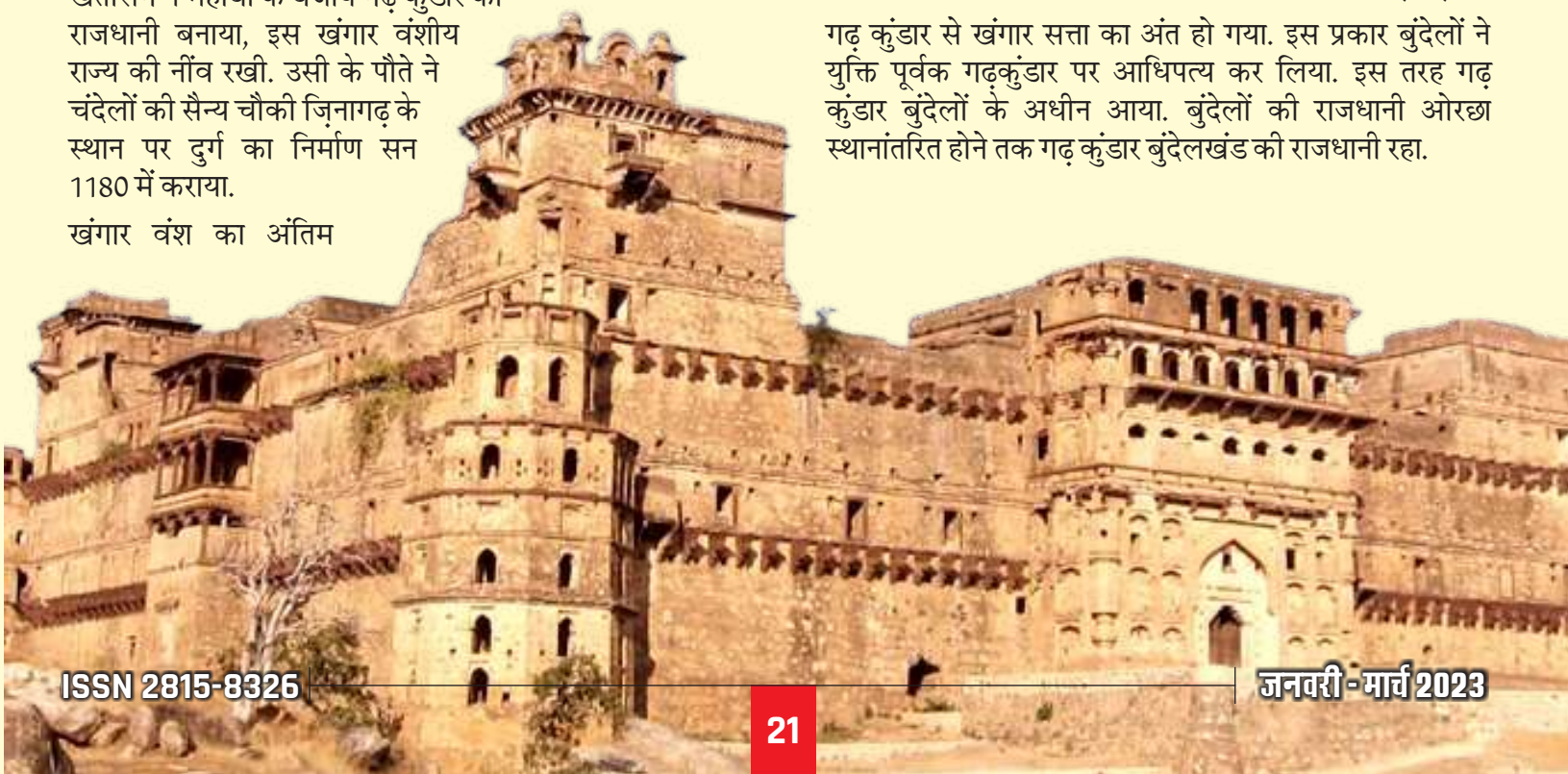

दलाल

रामेश्वर महादेव वाढेकर

विश्वजीत : 'कल्याण पढ़ाई महत्वपूर्ण है ज़िंदगी में.'

कल्याण: 'हां. सही है विश्वजीत तुम्हारा कहना लेकिन परिस्थिति पढ़ाई करने जैसी नहीं है. थोड़ी पढ़ाई हुई है अच्छा बुरा समझने जितनी, व्यवसाय करने जितनी.'

विश्वजीत: 'स्नातक की डिग्री प्राप्त करने के बाद तू स्पर्धा परीक्षा की तैयारी करके अच्छा पद हासिल कर सकता है.'

कल्याण : 'विश्वजीत मुझे व्यवसाय में रुचि है.'

विश्वजीत: 'कौन सा व्यवसाय करेगा ?'

कल्याण: 'तुम्हारे मन में है कोई कल्पना हो तो बता दो ?'

विश्वजीत: 'तुझे जो अच्छा लगे वही कर लेकिन व्यवसाय की शुरुआत कम पैसों से कर.'

कल्याण: 'मेरे पास पैसे नहीं है ज्यादा. परिवार में बड़ा मैं ही हूं. मां, बाप की जिम्मेदारी मेरे कंधों पर है. जमीन भी नहीं है मेरे पास लेकिन मुझे ज़िंदगी में बदलाव करना है.'

विश्वजीत: 'व्यवसाय की शुरुआत कैसे करेगा ?'

कल्याण: 'फाइनेंस करके रिक्शा लेना चाहता हूं.'

विश्वजीत: 'अच्छा है, लेकिन हफ्ता (किश्त) समय पर भरना होगा, नहीं तो फाइनेंस के कर्मचारी रिक्शा ले जाएंगे. सोच समझकर निर्णय ले.'

कल्याण : 'हां.'

रिक्शा लिया, व्यवसाय की अच्छी शुरुआत हुई. सब ठीक ठाक चल रहा था, ज़िंदगी अच्छी गुज़र रही थी. जो सपने देखे थे, वे साकार होते दिख रहे थे लेकिन कुछ ही दिनों में एक समस्या से सामना हुआ. क्या करे समझ में नहीं आ रहा था. उसी समय फोन आया.

'हॅलो. कौनहै ?'

'पहचाना नहीं.'

'आवाज तो सुनी हुई है, पहचान की है, लेकिन नाम याद नहीं आ रहा.'

'मैं हूं विश्वजीत. तुम्हारा मित्र.'

'अच्छा. पहचाना. बहुत दिनों बाद फोन.'

'हां. काम की व्यस्तता की वजह से नहीं कर पाया. कैसे चल रहा है रिक्शा तुम्हारा ?'

'जो है अच्छा है.'

'क्या हुआ ? परेशानी में हो, पैसों की जरूरत है क्या तुम्हें ?'

'पैसों की जरूरत नहीं लेकिन मानसिक परेशानी में हूं.'

'क्या हुआ ?'

'जाने दो भाई, बताकर क्या फायदा,जो होना है वह हो रहा है.'
यह गलत है तेरा कहना कि दु:ख बताकर क्या फायदा. दु:ख बताने से मन का बोझ हल्का होता है. नए रास्ते निकल सकते हैं.
'विश्वजीत व्यवस्था बहुत बुरी और भ्रष्ट है. हर गरीब का शोषण कई माध्यम से करती हैं.'
'कैसे ? मैं नहीं समझा.'
मेरा ही उदाहरण लो, मैंने रिक्शा लिया फाइनेंस निकालकर. कुछ दिनों बाद कोरोना महामारी के कारण लॉकडाउन हुआ. बहुत दिनों तक घर के बाहर निकलना मुश्किल था. एक साल बाद चंद घंटो की मुद्दत मिली. रिक्शा चलने लगा. थोड़ा पैसा मिलने लगा. घर का खर्चा, रिक्शा का हफ्ता इसी में था. उसी समय ट्रैफिक पुलिस हर गाड़ी से पैसे वसूल करने लगे.
'नहीं दिए तो ?'
'कुछ भी कारण बताकर दो हजार रुपये का फाइन कर देते. गाड़ी पुलिस स्टेशन लेकर जाते थे और दूसरे दिन कोर्ट में तारीख. इसमें बहुत पैसा खर्च होता था और दुश्मनी भी. इसलिए उन्हें पैसा देते थे.'
'उनके खिलाफ़ शिकायत क्यों नहीं दर्ज़ करते ?'
'किन किन की शिकायत दर्ज़ करें. सभी की मिली भगत हैं. सब मिल बांटकर खाते हैं ऊपर से लेकर नीचे तक. सौ में से एकाद अधिकारी ईमानदार है उन्हें भी भ्रष्टाचारी बनने के लिए मज़बूर किया जाता है. वह भ्रष्टाचार में शामिल नहीं हुआ तो उनके साथ षड़यंत्र रचाकर उन्हें बदनाम किया जाता है. तबादला भी. बहुत से अधिकारी दलाल है दलाल.'
'हिम्मत मत हार कल्याण. तुझे इस भ्रष्ट व्यवस्था के खिलाफ़ लड़ना होगा. आवाज उठाना होगी. तेरी हार याने एक तरह से सब गरीब रिक्शा वालों की हार है.'
मैं बहुत परेशान हूं, एक तरफ फाइनेंस का हफ़्ता तो दूसरी तरफ शहरी और ग्रामीण पुलिस स्टेशन का हफ़्ता. एकाद बार फाइनेंस का हफ़्ता नहीं भरा तो चल सकता है लेकिन ट्रैफिक पुलिस का नहीं.
'ग्रामीण और शहरी पुलिस स्टेशन का हफ़्ता यानी, मुझे कुछ समझ नहीं आया ?'
मैं गांव से पैसेंजर शहर लेकर जाता हूं ओर शहर से पैसेंजर गांव लेकर आता हूं. गांव का अलग ग्रामीण पुलिस स्टेशन है ओर शहर का अलग शहरी पुलिस स्टेशन. इस कारणवश मुझे दोनों पुलिस स्टेशन को हफ़्ता देना पड़ता है.
'यह गलत है, कानून के खिलाफ भी.'
कानून सिर्फ़ गरीब के लिए है अमीर लोगों के लिए नहीं. हमारे साथ कुछ बड़े लोग हैं गाड़ी चलाने वाले. उनकी विधायक, सांसद से जान पहचान है इस कारण उन्हें हफ़्ता नहीं भरना पड़ता. हफ़्ता सिर्फ़ सामान्य लोगों के लिए है.
'ट्रैफिक पुलिस को सरकार से तनख्वाह मिलती है, तब भी वे नीच काम क्यों कर रहे है कल्याण ?'
'वही तो समझ नहीं पा रहा हूं? उनके शोषण की वजह से कई ड्राइवर मज़बूरी में भूखे मर रहे हैं तो कोई खुद को खत्म कर रहे है.'
'मेरे भी बहुत सपने थे लेकिन सब मिट्टी में मिलते लग रहे हैं.'
'विधायक, सांसद के पास क्यों नहीं जाते समस्या लेकर.'
'क्या फायदा ? सभी विधायक, सांसद अच्छे नहीं होते.'
'मतलब ?'
'विधायक, सांसद को हर गंदे काम से कुछ प्रतिशत पैसा मिलता है.'
'हार मत. संघर्ष जारी रख. तुझे न्याय मिलेगा.'
'कब तक ? कितनी पीढ़ियां बर्बाद हुई इन समस्याओं से.'
कल्याण तुम्हें फुले, शाहू, आंबेडकर के विचार हारने नहीं देंगे, क्योंकि उनके विचार से प्रभावित कोई भी व्यक्ति हार नहीं सकता. तुझे महापुरुष के विचार अन्याय के विरुद्ध लड़ने के लिए प्रोत्साहित करेंगे. तुम्हें लोगों को संगठित करना होगा, तभी समाज में जागरूकता आएगी ओर प्रशासन में परिवर्तन संभव है अन्यथा नहीं.
'हां. विश्वजीत मैं अंत तक भ्रष्ट व्यवस्था के खिलाफ़ लड़ता रहूंगा. हार नहीं मानूंगा.'
'कल्याण आफ़िस में कोई आया है, मैं फोन रखता हूं. खुद का ख्याल रखना. बाय.'
'तुम भी परिवार का ख्याल रखना. कभी कभार फोन लगाते रहना. बाय.' ■

निखत ज़रीन
भारत की पांचवीं महिला बॉक्सर

कृपा मालाराव

महिला विश्व मुक्केबाजी चैम्पियनशिप के 52 किलो वर्ग का मुकाबला तुर्की के इस्तांबुल में था साल 2022 में और इस फ़्लाईवेट फ़ाइनल मुकाबले में थाईलैंड की जितपोंग जुतामास को हरा कर 25 साल की उम्र में भारतीय बॉक्सर निखत ज़रीन ने विश्व चैंपियनशिप अपने नाम की.

मैरी कॉम, सरिता देवी, जेनी आरएल और लेखा केसी के बाद निखत ज़रीन पांचवीं भारतीय महिला मुक्केबाज़ हैं जिन्होंने विश्व चैम्पियनशिप में गोल्ड मेडल जीता है.

निखत के पिता मोहम्मद जमील अहमद बेटी की जीत पर कहते हैं, 'निखत ने आज महिला विश्व चैम्पियनशिप में गोल्ड जीत कर पूरे देश को गौरवान्वित किया है. यह जीत उन सभी लाखों भारतीयों को समर्पित है जिन्होंने उसकी यात्रा के दौरान उसको सपोर्ट किया.'

निखत की मां परवीन सुल्ताना ने कहा 'ये हमारे परिवार के लिए बहुत बड़ा पल है. मेरी बेटी देश के लिए गोल्ड लेकर आई है. कई ऐसे पल आए जब हमारे रिश्तेदार और दोस्तों ने हमारा, निख़त का मज़ाक बनाया, लेकिन हमें भरोसा था निख़त पर और हम उसे सपोर्ट करते रहे. उसकी मेहनत का नतीजा सबके सामने है.'

निखत ने 13 साल की उम्र से बॉक्सिंग शुरू किया था और छह महीने के भीतर साल 2010 में करीमनगर में स्टेट चैम्पियनशिप का गोल्ड मेडल जीता था.

इसके तीन महीने के भीतर, निखत को इरोड (तमिलनाडु) में सबजूनियर चैम्पियनशिप में 'सर्वश्रेष्ठ मुक्केबाज़' चुना गया. जल्द ही निखत भारतीय खेल प्राधिकरण (साई) के कैंप में शामिल हो गईं.

आठ महीने के प्रशिक्षण के बाद साल 2011 में विश्व जूनियर और युवा चैम्पियनशिप में गोल्ड मेडल जीत कर निखत ने अपने सपनों को हक़ीक़त में बदलना शुरू कर दिया.

विश्व चैम्पियन बनने के बाद अपनी जीत के बारे में उन्होंने कहा 'ये जीत मेरे मातापिता के लिए है. मैं जब भी अपनी मां को फ़ोन करती वो नमाज़ पढ़ कर आ रही होती थीं और मेरी जीत के लिए दुआ करती थीं. ये दुआ ऊपर वाले ने क़ुबूल की, ये जीत ये गोल्ड उनका है. सबको पता है कि मेरे पिता ने मुझे कितना सपोर्ट किया है. मेरी जीत मेरे माता-पिता को समर्पित है.' ■

मंत्री बंदर मस्त कलंदर

डा. हेमंत कुमार

गबरू शेर इधर बहुत चिंतित रहता था. उसके जंगल में लगातार आतंकी हमले हो रहे थे. कभी पेड़ों की झुरमुट में तो कभी गुफा में बम विस्फोट होता. उसे लग रहा था कि अब भालू को गृहमंत्री पद से हटाना ही होगा लेकिन फिर किसे गृहमंत्री बनाया जाय? इस पद पर तो कोई तेज और ईमानदार व्यक्ति होना चाहिए. चीता चालाक फुर्तीला तो था, पर था बहुत गुस्सैल. हाथी ठहरा आलसी. सियार तो पक्का चोर था. सवाल था आखिर किसे दिया जाय यह पद?

गबरू गुफा के सामने बैठा नाश्ते का इंतजार कर रहा था. अचानक उसे एक उपाय सूझा. उसने तुरंत खरगोश को भेज कुत्ते को बुलवाया और उससे बोला, 'जाओ, जंगल में डुगडुगी पीट दो' अगले सोमवार को जंगल के सारे जानवर जंगल के बीच वाले बरगद के नीचे इकट्ठे हों. वहां एक नया खेल होगा. बरगद की सबसे ऊंची डाल पर एक घड़ा लटका रहेगा. जो भी जानवर बिना पेड़ पर चढ़े सबसे ऊंचा कूदकर घड़ा फोड़ेगा वही मेरा नया गृहमंत्री बनेगा.'

बस फिर क्या था? अगले दिन से ही सारे जानवर जुट गये तैयारी में. कोई दूर तक दौड़कर कूद रहा था, कोई ऊंचे टीले पर चढ़कर कूदने का अभ्यास कर रहा था. जानवरों के साथ

जंगली मुर्गे और तीतर भी अभ्यास में जुट गये. अब भला पानी वाले जीव कैसे पीछे रहते. मछलियां पानी से सिर निकाल निकाल कर उछलने लगीं. कछुए चट्टानों पर से पानी में कूदने लगे. कुछ जानवरों ने तो अपना खाना भी बढ़ा दिया जिससे उनमें ताकत आये, वे ऊंचा कूद सकें.

पूरे जंगल में बस एक जानवर आराम से बैठा था, वह था बंदर. उसे जैसे कोई चिंता ही नहीं थी. वह पेड़ की ऊंची डाल पर बैठ जाता और दिन भर दूसरे जानवरों की उछलकूद को चुपचाप देखता. अगर कोई जानवर उससे पूछता तो वह मुस्कराकर जवाब देता

'मैं तो बंदर, मस्त कलंदर,

उछलूं कूदूं डाल डाल पर.'

जानवर हैरान होकर उसे देखते. वह खी खी करके हंस देता.

धीरे धीरे दिन बीतते गये. अंत में वह दिन भी आ गया जिसका सारे जानवरों को इंतजार था यानी घड़ा फोड़ने का दिन. सबेरे से ही जंगल में तैयारियां हो रही थीं. बीच जंगल में बरगद के पेड़ के नीचे सारे जानवर एक एक कर पहुंचने लगे. सब एक से एक कपड़े और जूते पहने थे. कुछ जानवरों ने तो टोपी और रंगीन चश्मा भी पहन रखा था.

बंदर एकदम सादे कपड़े पहन कर आया था. बस, उसने एक लंबा सा पतला बांस जरूर ले रखा था. चीते ने देखा तो बोला, 'बांस से घड़ा फोड़ोगे तो शेर तुम्हें कच्चा चबा जाएगा.'

बंदर धीरे से बोला

'मैं तो बंदर, मस्त कलंदर,

उछलूं कूदूं डाल डाल पर,' और हंस पड़ा दांत निकालकर.

कुछ देर बाद ही वहां गबरू शेर भी आ धमका. उसके आते ही सारे जानवर खड़े हो गये. शेर ने सबको बैठने का इशारा किया और खुद भी एक ऊंचे चबूतरे पर बैठ गया. गबरू के इशारा करते ही खेल शुरू हो गया.

सबसे पहले चीता आगे आया. उसने बरगद की ऊंची डाल पर टंगे घड़े को देखा. फिर काफी दूर तक गया और दौड़ कर उछला पर भद्द से गिरा जमीन परद्ध कुछ जानवर हंसने लगे. गबरू ने उन्हें डांटकर चुप कराया.

फिर आया सियार का नंबर. वह जोर से 'हुंआ हुंआ' चिल्लाया और उछला घड़े की ओर. पर घड़े तक नहीं पहुंच सका. उसके गिरते ही सारे जानवरों के साथ गबरू भी हंस पड़ा. मुर्गा और तीतर तो सीधे पेड़ पर चढ़ गये. उन्होंने छलांग भी लगायी पर घड़े तक पहुंचने के पहले ही नीचे गिर गये. मुर्गे की एक टांग टूट गयी. तीतर के पंख गिर गये. फिर तो घड़े तक पहुंचने के चक्कर में कई जानवर गिरते गये. गबरू ने सोचा, लगता है ठीक ठाक मंत्री नहीं मिलेगा. उसी समय बंदर पतला बांस लेकर उठा. गबरू ने उसे रोकने की कोशिश की बोला, 'बांस से घड़ा मत फोड़ना.'

बंदर मुस्करा कर बोला,

'मैं तो बंदर, मस्त कलंदर,

उछलूं कूदूं डाल डाल पर.'

फिर उसने बांस का एक सिरा खुद पकड़ा. दूसरा सिरा जमीन पर टिका कर उसे हल्का सा झटका दिया. अगले ही पल वह घड़े के पास था. उसने बांस छोड़ा, घड़ा फोड़ा और रस्सी पकड़ कर लटक गया. इस पूरे काम में उसे कुछ ही सेकेंड लगे. उसकी फुर्ती देख गबरू के साथ सारे जानवर हक्के बक्के रह गये. बंदर नीचे आया और हाथ जोड़कर गबरू के सामने खड़ा हो गया.

गबरू बोला, 'शाबाश बंदर शाबाश. तू तो बहुत बुद्धिमान है. बहादुर और फुर्तीला भी. तू ही मेरा मंत्री बन जा.'

'जो आपकी आज्ञा हो हुजूर,' कह कर बंदर उसके सामने सिर झुका कर खड़ा हो गया.

गबरू अपनी जगह से उठा. उसने पास में रखी माला बंदर को पहना दी. सारे जानवर तालियां बजाने लगे. गबरू बंदर को गले लगाता हुआ बोला

'ये था बंदर मस्त कलंदर

घूमा करता डाल डाल पर

पर अब मेरे साथ रहेगा,

मेरा प्यारा मंत्री बनकर.' ■

कथाओं को प्रवाहमान करती ‘नदी की आंखें’

नवीन जोशी

नवीन जोशी जी की समीक्षा प्राप्त करना सरल नहीं है यह प्रतिसाद केवल कुछ अच्छी बहुत अच्छी किताबों को ही मिल पाता है.

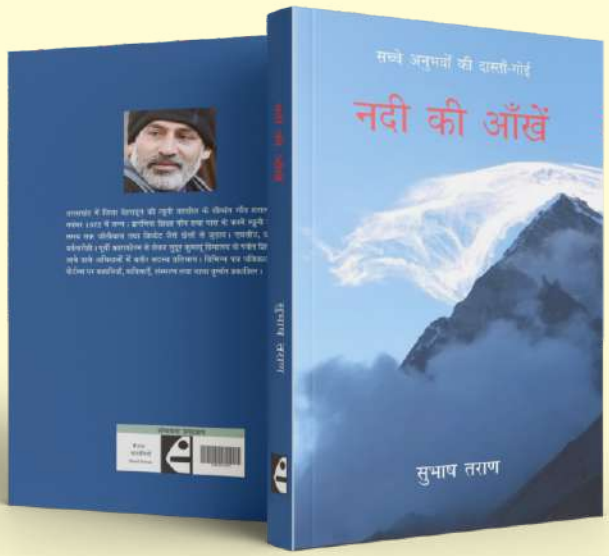

यहां कई तरह की नदियां हैं. एक नदी लेखक के गांव में बहती है. एक नदी दूर वहां सीमेंट कंक्रीट मानवों के जंगल दिल्ली में गंधाती है. एक नदी उच्च हिमालय में गल के रूप में सरकती थमती है. एक नदी स्मृतियों में महकती है. एक नदी जीवन को तरल रखती है. एक नदी कथाओं को प्रवाहमान बनाती है. बहुत सारी नदियां हैं या एक ही नदी है जिसके अनंत रूप हैं. उस नदी की आंखें हैं. वे आंखें कितना कुछ देखती हैं.

‘नदी की आंखें’ सुभाष तराण की किताब है जिसे संभावना प्रकाशन ने प्रकाशित किया है. पुस्तक को ‘सच्चे अनुभवों की दास्तांगोई’ कहा गया है. ये रूढ़ अर्थों में कहानियां नहीं हैं, हालांकि कहानियों का आस्वाद भी कराती हैं. सुभाष तराण खिलाड़ी हैं, यात्री हैं, पर्वतारोही हैं और उनके भीतर पहाड़ों की दुर्गम यात्राओं से उपजे अनभुवों की समृद्ध पोटली है. इस पोटली में नदियों, पहाड़ों, जंगलों, जानवरों और इंसानों के किस्से हैं. ये किस्से कहानियां इंसानी फितरतों के खुरदरेपन के हैं तो मुहब्बतों की चासनी में डूबे हुए भी. घुमक्कड़, पहाड़प्रेमी, नदी के आशिक और संवेदना के धनी सुभाष लेखक सबसे बाद में हैं. इसलिए इन्हें पढ़ने का सर्वथा नया आनंद है, नई अनुभूति और खांटी मौलिकता से परिचित होना है.

क्याक्या देखती हैं ‘नदी की आंखें’? वे ‘लोहे और पत्थरों के मंसूबों को ध्वस्त करने वाले’, नाम के सुनार लेकिन काम के लोहार को देखती हैं और उसके शिल्प एवं श्रम को गहराई से महसूस करती हैं. वे ग्वाले नूर मुहम्मद को देखती हैं जिसके बछड़े को अंधेरी बरसती रात में तेंदुआ अधमरा कर गया था लेकिन जिसे पहाड़ी से लुढ़कते दूध के बर्तन के पीछे जान हथेली पर धर कर दौड़ना पड़ा था क्योंकि ‘गरीब की विडम्बना यह है कि अनेकों बार उसके जीवन का मोल किसी बर्तन के समकक्ष हो जाता है. ‘नदी की आंखें’ हाशिए का वह पहाड़

देखती हैं जहां सरकार की अनदेखी और प्रशासन की ढुल मुल नीतियों के चलते स्थानीय बाशिंदों ने फतेह पर्वत की समृद्धि के प्रतीक पारंपरिक व्यवसाय पशुपालन और खेती बाड़ी से विमुख होकर अपनी जमीनें धड़ाधड़ औने पौने में बेचना शुरू कर दिया है.'

नदी की आंखें जितना गहरा देखती हैं उससे अधिक महसूस करती कराती हैं. मेमनों से पहले पहल उतारी गई, पश्मीने को भी मात करने वाली ऊन से बुनी मुलायम चादर से बच्चे के लिए कोट सिलवाकर जब एक पशुचारक पिता प्रफुल्लित होना चाहता है तब बच्चे की खुशी अपना वही कोट एक मेमने को पहना देने में व्यक्त होती है. वह नन्हा मेमना उस कोट को पहनकर प्रसन्नता या आतंक में ऐसी छलांगें लगाता है कि गहरी खाई में जा गिरता है, तब पिता पुत्र ही नहीं पाठक भी सन्नाटे में आ जाता है. वह एक सुंदर कोट का जाना नहीं, मेमने के रूप में परिवार के एक सदस्य का जाना होता है. किसी त्योहार के दिन चरवाहे जातीराम के लिए गांव से आई रोटी की पोटली को जब बंदर उठा ले जाते हैं तो रोटियां वापस पाने के लिए नहीं, बल्कि घी का डिब्बा भी वानरों को सौंपने के लिए दौड़ लगाते जातीराम के साथ साथ हमारा मन भी कह उठता है कि वानरो, रोटियों में चुपड़ने के लिए घी भी तो ले जाओ.

'बुढ़िया की भेंट' हो या 'तेगसिंह की दावत', 'साइबो को पाप' हो या 'किन्नौरी लड़की' या 'इंसाफ का तकाजा' और दूसरे किस्से, उनका उत्स सुदूर, दुर्गम हिमालयी समाज के बीच विचरण के उन साक्षात अनुभवों में है जिन्हें अति संवेदनशील दिल दिमाग ही पकड़ सकता है. 'और घर बस गया' में नवब्याहता के कोठार से निकली वह चीख पाठक के भीतर देर तक बनी रहती है जो 'घर बसाने के लिए' परिवार की सहमति से किसी पराए मर्द की जकड़न में घोंसले में सांप द्वारा दबोचे गए चूजे की आखिरी कोशिश जैसी फूटती है.

इसीलिए इन 'कहानियों' में खांटी मौलिकता है जो पाठक को नए आस्वाद के साथ गहरे छू जाती है. अंतिम किस्सा 'प्रेम का प्रभाव' इस वक्तव्य के साथ पूरा होता है 'मैं बिना किसी लाग लपेट के इस नतीजे पर पहुंच चुका था कि दुनिया में ऐसी इकलौती शै प्रेम ही है जो मनुष्य के भीतर तरलता बनाए रखती है.'

'नदी की आंखें' इसी तरलता से भरी हैं और पाठक के भीतर भी नमी छोड़ जाती हैं.

प्रसंग

हर हालत में पिटते

जयप्रकाश मानस

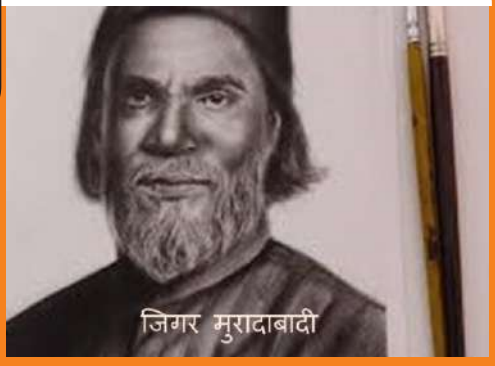

असली नाम था अली सिकंदर लेकिन हम सब जानते हैं उनको जिगर मुरादाबादी के नाम से.

जिगर मुरादाबादी साहब की महफ़िल सजी थी. जाने कहां से एक मनचला भी वहां आ टपका. उसकी आंखों में शरारत साफ़ झलक रही थी. उसने ज़िगर साहब के किसी एक शेर का ज़िक्र करते हुए कहा 'जनाब, यह शेर जब मैंने लड़कियों के एक ज़लसे में पढ़ा, तो पिटते पिटते बचा.'

ज़िगर उसके मज़ाक को ताड़ चुके थे.

जानते हैं उन्होंने क्या कहा ?

वे बोले 'बरखुदरदार, आपने बिल्कुल सही फ़रमाया, इस शेर में ज़रूर कोई नुक्स है, वरना आप हर हालत में पिटते.'

गुलज़ार यूं ही गुलज़ार नहीं

डॉ. अनुराग आर्य

गुलज़ार यूं ही गुलज़ार नहीं, वो एक ऐसे डायरेक्टर हैं जो डायलॉग भी लिखते हैं, स्क्रीन प्ले भी, गीत भी. वो बिमल रॉय ,असित सेन, ऋषिकेश मुखर्जी बासु भट्टाचार्य की स्कूल की पैदाइश थे जिनका स्टोरी टेलिंग का अपना मेथड था.

गीत लिखने आया लड़का कहानियों से वाकिफ था. वो कहानियों की नब्ज़ पकड़ता उन्हें टटोलता फिर उनमें खुश्बू डाल देता. कहते हैं कि एक ही कहानी को अगर चार लोग कहें तो सब अपने मिज़ाज से कहते हैं. उस लड़के का भी अपना मिज़ाज था. एक दफे एक बंगाली डायरेक्टर ने एक बंगाली कहानी पर फ़िल्म बनाई ,सिप्पी साहब को फ़िल्म पसंद आयी सो उन्होंने कहा इसे हिंदी में बना दो. डायरेक्टर साहब बोले बना दूंगा पर कास्ट वही होगी.

सिप्पी साहब को मंजूर नहीं था. किसी ने उनसे कहा था ये गीत लिखने वाला चश्मे वाला लड़का संजीदा है, डायलॉग तो लिखता ही है, कैमरे को भी समझता है, सो उन्होंने उस लड़के को कहा फ़िल्म बना दो. मुखर्जी दा उन दिनों फिल्म बनने के बाद एडिट भी करते थे और मशवरे भी दिया करते थे उनकी हां के बाद उस लड़के को डायरेक्टर की कुर्सी मिल गई. उस लड़के ने मीना कुमारी के साथ हिंदी फिल्मों के दो विलेन कास्ट किये और फ़िल्म बना दी और हमें डायरेक्टर गुलज़ार तो मिले ही, विनोद खन्ना एक बदले अंदाज में भी मिल गये.

फ़िल्म थी 'मेरे अपने'. यूं तो फिल्म शॉट दर शॉट बंगाली फिल्म की कॉपी थी. वो एक वक्फे में बना डायरेक्टर था जिसके पास कई कहानियां कहने को थीं. वो कहानियां जो बाद में उस दौर की नस्ल ने सुननी थी और कुछ नस्लों ने उन्हें अपने पास जमा रखना था. जाहिर है बंगाल से ये रिश्ता आगे हिंदी सिनेमा को और 'रिच' करने वाला था.

वो स्कूल जिसकी कहानियों में कोई 'ओबियस विलेन' नहीं होता था. वहां विलेन था 'वक़्त' यानी 'हालात'. किसी राइटर को डायरेक्टर बना दो तो कहानी डोमिनेंट हो जाती है, किरदार आसानी से 'ड्रॉ' हो जाते हैं, पर एक दूसरे खतरे की गुंजाईश रहती है. अपनी कहानी को वो जिस तरह विज्यूलाइज़ करता है, स्क्रीन पर उसे, उस तरह रखने की तरतीब कई बार उसे नहीं आती. यानी आप के पास एक शै का फन तो रहता है दूसरी शै में शायद आप कच्चे हो. और खुलासे से कहूं तो किसी शॉट के दरमियान बहुत सी चीज़े मायने रखती हैं. बैकग्राउंड में झूलती कुर्सी, हिलते परदे ,मेज पर रखा चश्मा, कितने डिस्टेंस से कैमरा किरदार से बात कर रहा है, ये बहुत बारीक शै है पर किसी सीन का हिस्सा रहती है. ये फन आहिस्ता आहिस्ता ग्रूम करता है.

बाद के सालो में आप 'लेकिन' को देखेंगे तो पाएंगे रेगिस्तान उस

फिल्म का एक किरदार है. कहानियां दो तरह की होती हैं, एक जिन पर एतबार किया जा सकता है, दूसरी जिन पर नहीं. आर्ट और पेरेलल सिनेमा से अलग उस स्कूल का सिनेमा यही था. गुलजार जानते थे स्क्रीन पर चलने के लिए किसी कहानी को क्या चाहिए. वे उसे एक्स्टेंड करते थे इस तरह से कि कहानी की रूह नहीं मरती थी और किरदारों को एक चेहरा मिलता था. मसलन 'खुश्बू' एक छोटी सी कहानी थी जिसे उन्होंने स्क्रीन प्ले में कन्वर्ट किया.

'मोरा गोरा अंग ले ले' भी उन्हें इसलिए मिला था क्यूंकि शैलेंद्र और मुखर्जी दा में कुछ अनबन हुई और शैलेन्द्र ने गुलजार को गीत लिखने को आगे किया था.

गुलज़ार जिन्हें लगता था फिल्म वाले टेस्ट नहीं समझते और इसलिए फिल्म में आना नहीं चाहते थे. शैलेंद्र के इसरार पर आये.

उन्होंने बताया लोग बिमल रॉय के साथ काम करने के लिए पागल रहते हैं. शुरू में उनके तखल्लुस की वजह से मुस्लिम समझा गया. बाद में पता लगा ये तो बंगाली बोलने वाला सरदार है जिसका असली नाम संपूर्ण सिंह कालरा है. जिसके खानदान में शुरू में इस बात का गम था के 'हमारे खानदान में ये मिरासी कहां से पैदा हो गया ?'

गीत लिखने वाले लड़के ने आहिस्ता आहिस्ता अपनी जगह बना ली वही मख़सूस जगह थी उनके लिए. वो पहले ऐसे डायरेक्टर थे जो डायलॉग भी लिख लेते थे, स्क्रीन प्ले भी और गीत भी. पर गुलज़ार यूं ही गुलज़ार नहीं थे. आनंद फिल्म के डायलॉग सुनिए 'काश हम अपनी मर्जी से अपने रिश्तेदार चुनते जैसे हम दोस्त चुनते हैं.'

ये उनकी नज़्में हैं जो डायलॉग बनी हैं.

'मौत तुझसे मिलने का वादा है', वो नज़्म कहानी का हिस्सा ही है, एक बड़ा हिस्सा.

आशीर्वाद फिल्म याद कीजिये और उसमें कही गयी बातें. मुझे अशोक कुमार जिन फिल्मों से याद रहते हैं, आशीर्वाद उनमें से एक है और 'ख़ामोशी' उसका स्क्रीन प्ले कितना बढ़िया.

डायरेक्टर गुलज़ार दरसल एक पुल थे कहानी और सिनेमा के बीच. कहानियों का उनका तर्जुमा इस तरह से होता था कि वे अपना इमोशनल कंटेट बरकरार रखते हुए आम ऑडिएंस से कनेक्ट होतीं थीं. फ़िल्म की कमर्शियल वेल्यू का वापस मिलना और फायदे में रहना प्रोड्यसर का उनमें बिलीव पैदा करता था. एक डायरेक्टर की

क्रिएटिविटी की भूख भी शांत हो जाती थी और उसे अपनी तरह से कहानी कहने की आज़ादी भी मिल जाती थी.

किसी डायरेक्टर का पढ़ा लिखा होना क्यों सिनेमा और उसके ऑडिएंस के लिए जरूरी है, ये इस बात को बतलाता है. पढ़े लिखे से मतलब एजुकेशन से नहीं है. पढ़े लिखे से मतलब दुनिया भर की, अपने आस पास की कहानियों से वाकफियत है. रॉय मुखर्जी सेन स्कूल से निकले तो वे सब अपने साथ नई कहानियां ले कर आय. अलबत्ता कहानियां बंगाली ही थीं.

खवाजा अहमद अब्बास की कहानी से हमें 'अचानक' मिली, साउंड ऑफ़ म्यूज़िक से इंस्पायर्ड 'परिचय'. A j Cronin's के नॉवल the Judas tree पर हमें 'मौसम' मिली, सुबोध घोषाल की कहानी पर 'इज़ाज़त', शरदचंद चटोपध्याय की कहानी पर 'खुश्बू', रवींद्रनाथ टैगोर की कहानी कुडिटो पाषाण पर 'लेकिन'. 'आंधी' को भी सचिन भौमिक ने लिखा जिसके लिए कमलेश्वर को स्क्रीन प्ले लिखने को कहा गया. कहते है मृणाल सेन भी इजाज़त बनाना चाहते थे, मृणाल सेन की बिरलिएंस पर किसी को कोई शक नहीं पर हर कहानी का एक ट्रीटमेंट होता है, कहने का अपना तरीका. आदमी औरत के रिश्ते की बाबत इस तरह कहने की नफासत के लिए अलग तरह की कैफियत का होना लाज़मी है.गुलज़ार में वो फन था.

एक और दिलचस्प बात मुझे लगी उनकी फिल्मों में नॉन एक्टर भी एक्टर जैसे लगे. मसलन जितेंद्र ,जिन्हें कमोबेश बतौर एक्टर सीरियस लिया नहीं गया.

'परिचय', 'खुशबू' और 'किनारा' ने उन्हें एक अलग मुकाम दिया. शायद उनके पास जो बेहतरीन काम है उनमें यही शामिल है. हेमा मालिनी यक़ीनन एक लोकप्रिय ऐक्ट्रेस थीं पर मुझे हमेशा उनके एक रेंज में रहने की लिमिटेशन दिखी. 'खुशबू' में वे अलग दिखती हैं. कहने वाले तो ये भी कहते हैं कि गुलज़ार को हमेशा कहानी कहने की आदत फ्लैशबैक से है. उनकी ज्यादातर कहानियां फ्लैशबैक में हैं.

'किताब', समरेश बासु की कहानी पर आयी फिल्म. हिंदी सिनेमा में, मेन स्ट्रीम सिनेमा में बच्चे को मुख्य किरदार में लेकर इस बजट की कितनी फिल्म बनी हैं? 77 में बच्चन के एंग्री यंग मैन फिनोमिना के दौर में एक शायर किसी बच्चे की कहानी कहता है और इस मख़सूस तरीके से सुनाता है के आप उससे रिलेट करने लगते हैं. इस कहानी को कहने के लिए आपके पास एक अलग मिज़ाज चाहिए, एक अलहदा किस्म की दानाई, जो जाहिर ना हो.

उत्तम कुमार होकर भी नहीं हैं और 'धन्नो की आंख में चांद का सुरमा', मैं अब भी नहीं भूला हूं. उसकी धुन बजते ही मैं पहचान लेता हूं. किसी डायरेक्टर का यही क्राफ्ट है, उसके क्रिएशन को याद रखा जाये और याद तभी रखा जाता है जब कहानी कहने से पहले कहानी में खुद उसका यकीन हो.

गुलज़ार कहते हैं, उनके दो मेंटर रहे हैं संजीव कुमार और आर.डी. पर कभी कभी आप साथ रहते हुए एक दूसरे को कुछ देते हो और उस देने में आर्ट की, अदब की ग्रोथ होती है, जो लीनियर नहीं होती, मल्टी डायमेंशल होती है.

समरेश बसु की कहानी पर बेस्ड है उनकी एक और फिल्म 'नमकीन'

तीन लीड ऐक्ट्रेस को एक साथ लाते हुए उनका इस तरह से स्क्रीन पर प्रजेंस रखना कि तीनों को इस बात पर यकीन हो कि उनका स्पेस बरकरार रहेगा, ये बड़ी बात है. ये बतलाता है कि बतौर डायेक्टर गुलज़ार पर एक्टर का फेथ कितना है, कहानी पर कितना एतबार है और अच्छी कहानी में कितना यकीन है.

'शायद' शबाना के साथ उनकी पहली फिल्म थी। यहां संजीव कुमार की कमाल की अदाकारी तो थी जिसमें वो अपनी बॉडी लेंग्वेज से पूरे ट्रक ड्राइवर लगे हैं पर उस लोकेशन, उस घर से आप पहले सीन से ही जुड़ जाते हैं. ये भी साधारण लोगों की ही कहानी है जिनके लिए जीवन रोज एक संघर्ष है.

अगर आप इस कहानी को फिल्म से डिटैच करके पढ़ेंगे तो आपको लगेगा इस डार्क कहानी पर फिल्म कैसे बनाई जा सकती है? ऑडिएंस क्या इसे एक्सेप्ट करेगी? पर गुलज़ार फिर अपनी स्ट्रोरी टेलिंग आर्ट्स से इस कहानी को कह जाते हैं. संजीव कुमार इसमें नेरेटर हैं. कहानी तो दरसल तीन बहनों और उनकी मां की है, पर आप उनके जरिये इस कहानी में घुसते चले जाते है. फिल्म में सब कुछ है. एक स्त्री के संघर्ष, उसके गरीब और जवान होने से बढ़े संघर्ष, किसी घर में किसी पुरुष की एब्सेंस से सामाजिक सुरक्षा का टैग, अपनी इच्छाओं को ढकेलती लड़की, तीनों बहनों का अपना मिज़ाज.

मिर्जा ग़ालिब का जिक्र किये बगैर गुलज़ार को कहना नाइंसाफी होगी. ग़ालिब से गुलज़ार बरसों से मुतास्सिर थे, जाहिर है ग़ालिब को स्क्रीन पर बयान करना उनका सपना था और संजीव कुमार उनकी पहली पसंद. पर सिर्फ ग़ालिब को कहना वो भी आसान होकर ये उतना ही मुश्किल था. उन्होंने फिर क्राफ्ट यूज़ किया. पर नसीर को ग़ालिब के किरदार में लेना, किसी को उनकी इस चॉइस पर एतबार नहीं था, ना प्रोड्यूसर को, ना कैमरा मैन को, ना टीम को. पर गुलज़ार को नसीर में शायद कुछ दिखा. जब ग़ालिब कमोबेश टी वी स्क्रीन पर नुमाया हुआ हमें इस मीडियम की ताकत का इल्म हुआ. नॉन शायर लोग शायरी से मुतास्सिर हुए. उर्दू ज़ुबान का ज़ायका लोगों को लगा. लोग इसके टाइटल सांग को सुनने के लिए स्क्रीन पर बैठते और नसीर, जो इस किरदार के लिए जिद किये बैठे थे, वाकई ग़ालिब की रूह में उतर गए और दो सरदारों ने (जगजीत सिंह दूसरे सरदार हैं) ग़ालिब को ग़ालिब सी इज़्ज़त बख़्शी. जगजीत का शायद 'कहकशा' के अलावा ये बेस्ट काम है.

गुलज़ार ने बचपन में अपनी मां को खो दिया था. बिन मां के बच्चे में तल्ख़ होने की गुंजाईश ज्यादा रहती है. उसके पास शिकायतें मौजूद रहती हैं, पर गुलज़ार पता नहीं किस करिश्मे से आदमियत में यकीन रखते हुए अपने मिज़ाज में नरम रहे.मां पर उनकी नज़्म मुझे बेहद अज़ीज़ है. जब कोई मुझसे कहता है कि ईरान के डायरेक्टर अब्बास किरोस्तामी में रिश्तों पर, हालात पर, स्क्रीनी कहानियां कहने का हुनर है तो मैं हामी भरता हुआ कहता हूं कि हमारे यहां भी एक शख्स है गुलज़ार.

Global Finance can show you how to save interest on your Business, Commercial or Home Loan.
"In money matters it's important to us, as we know it's important to you." We'd be proud to be a part of helping you reach your goals quicker.
Speak with one of our Trusted Financial Advisors at your local branch to learn how.
global finance
Airport Oaks 09 255 5500
Henderson 09 836 5555
Tauranga 07 577 0011
Manukau 09 263 5555
North Shore 09 255 5591
Disclaimer: T & C's apply and subject to normal lending criteria.

इस तिमाही का चित्र

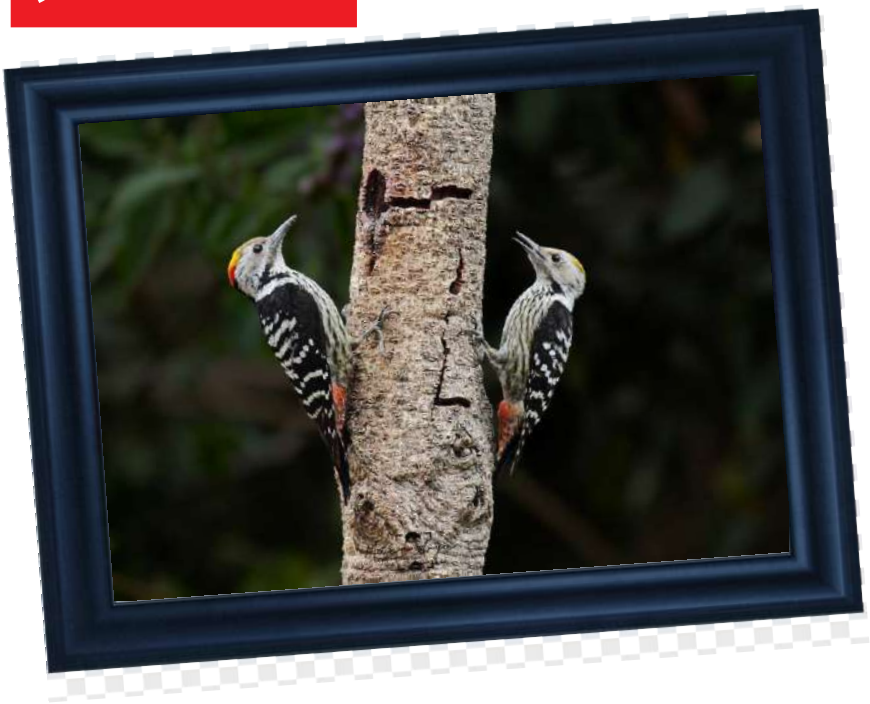

मनीष आर्य

वन्य जीवन संरक्षण/ छायांकन के क्षेत्र में मनीष आर्य एक जाना- माना नाम हैं. बीस दशक से ज़्यादा समय से इस क्षेत्र में कार्य करते हुए उन्होंने कई पुस्तकें लिखीं हैं, वन्य जीवों के प्रति जागरूकता के लिए कई अभियानों का हिस्सा रहे हैं और राजस्थान टूरिज़्म के लिए भी छायांकन और प्रकाशन का काम किया है. वन्य जीवों और प्रकृति से जुड़ी कई पुस्तकों और पत्रिकाओं में उनका कार्य प्रकाशित हुआ है.

पहचान हिंदी त्रैमासिक देश से हम, हमसे देश

अंतर्राष्ट्रीय, हिंदी त्रैमासिक ऑन लाइन पत्रिका ‘पहचान’ हेतु आप भी रचनाएं भेज सकते हैं.

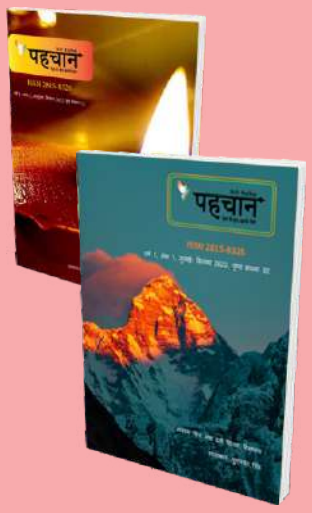

आलेख, समीक्षा, साक्षात्कार, शोध परक लेख, व्यंग्य, संस्मरण, यात्रा वृत्तांत, लोक साहित्य, बाल साहित्य, कविता, गीत, कहानी, लघु कथा आस्था, धरोहर, इतिहास, कला, विज्ञान, स्वास्थ आदि साहित्य की सभी विधाओं में रचनाओं का स्वागत है.

रचनाएं वर्ड फ़ाइल में अपनी तस्वीर और परिचय सहित भेजें. लेख के लिए 800 से 1,000 और कहानी के लिए अधिकतम शब्द सीमा 1600 शब्द है.

यदि आप अपना खींचा कोई चित्र पत्रिका के कवर पेज या फिर तिमाही चित्र चयन के लिए विचारार्थ भेजना चाहें तो अपने परिचय के साथ चित्र के बारे में बताते हुए ई मेल कर सकते हैं.

संपादक मंडल का निर्णय अंतिम निर्णय होगा, इसमें विवाद की गुंजाईश नहीं होगी.

editor@pehachaan.com